RNI क्र. 50309/85 डाक पंजीयन क्र. म. प्र./भोपाल/261/2021-23/पृष्ठ संख्या 44/प्रकाशन तिथि 1 फरवरी 2020

बाल विज्ञान पत्रिका, फरवरी 2021

चकमक

मूल्य ₹50

1

कमाल है

शादाब आलम
चित्र: योगिता धोटे

दादी जी की ठुड्डी पर जो एक बाल है
एक बाल ठुड्डी का सचमुच बेमिसाल है।

दिखने में वह पतला-सा, चाँदी का तार
दादी जी करती हैं उससे बेहद प्यार
दर्पण देखें तो हँसतीं हैं ठठ्ठा मार
कहतीं, मेरी दाढ़ी में कुछ झोलझाल है।
दादी जी की ठुड्डी पर जो एक बाल है...

हवा उसे चुपके-से आकर करे दुलार
मच्छर बैठा करता उस पर कभी-कभार
बड़े मज़े-से झूला झूले पल दो-चार
लगता जैसे कोई लटकी हुई डाल है।
दादी जी की ठुड्डी पर जो एक बाल है...

हैरानी से मैं उसका करता दीदार
डरते-डरते छूकर देखूँ दसियों बार
बातें करने को मन हो जाता तैयार
पूछूँ हँसकर, कहो मियाँ क्या हाल-चाल है?
दादी जी की ठुड्डी पर जो एक बाल है...

अंक 413 ● फरवरी 2021

चकमक

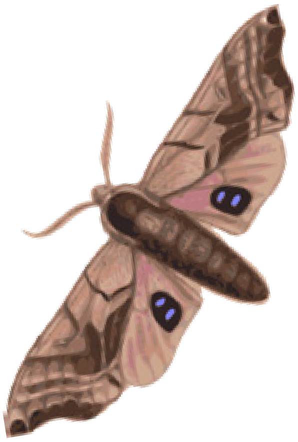

इस बार

कमाल है - शादाब आलम - 2
पत्थर चला घूमने - लोकेश मालती प्रकाश - 4
तुम भी जानो - 7
किताबें कुछ कहती हैं - नयनतारा वाकणकर - 8
क्यों-क्यों - 10
बड़ों का बचपन - छोटे लोगों का बचपन - सी एन सुब्रह्मण्यम् - 13
अबाबीलें - गौरांशी चमोली - 15
कतरनों से कलाकारी - शशिकला नारनवरे और मेघा चारमोड़े - 16
पप्पू भाईजान और कटी पतंग - अनिल सिंह - 18

पतंगे - नेचर कॉन्ज़र्वेशन फाउंडेशन - 22
चाबी वाले - निधि और मुनीर - 24
भूलभुलैया - 25
गोल चीज़ें क्यों लुढ़कती हैं - सुशील जोशी - 26
तालाबन्दी में बचपन - थकान ऑनलाइन - प्रार्थना - 28
माथापच्ची - 31
मेरा पन्ना - 32
माथापच्ची - 38
चित्रपहेली - 40
बन्दरों को खाना देकर... - रोहन चक्रवर्ती - 43
मछली जल की रानी है - रिनचिन, सुशील शुक्ल - 44

आवरण चित्र: इन्दु हरिकुमार

सम्पादन
विनता विश्वनाथन

सह सम्पादक
कविता तिवारी
सजिता नायर

सहायक सम्पादक
मुदित श्रीवास्तव

वितरण
झनक राम साहू

डिज़ाइन
कनक शशि

डिज़ाइन सहयोग
इशिता देबनाथ बिस्वास

विज्ञान सलाहकार
सुशील जोशी

सलाहकार
सी एन सुब्रह्मण्यम्
शशि सबलोक

एक प्रति : ₹ 50
वार्षिक : ₹ 500
तीन साल : ₹ 1350
आजीवन : ₹ 6000
सभी डाक खर्च हम देंगे

चन्दा (एकलव्य के नाम से बने) मनीऑर्डर/चेक से भेज सकते हैं।
एकलव्य भोपाल के खाते में ऑनलाइन जमा करने के लिए विवरण:
बैंक का नाम व पता - स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, महावीर नगर, भोपाल
खाता नम्बर - 10107770248
IFSC कोड - SBIN0003867
कृपया खाते में राशि डालने के बाद इसकी पूरी जानकारी accounts.pitara@eklavya.in पर ज़रूर दें।

एकलव्य
एकलव्य फाउंडेशन, जाटखेड़ी, फॉर्च्यून कस्तूरी के पास, भोपाल, मध्य प्रदेश 462 026
फोन: +91 755 2977770 से 3 तक; ईमेल: chakmak@eklavya.in, circulation@eklavya.in
वेबसाइट: https://www.eklavya.in/magazine-activity/chakmak-magazine

पत्थर चला घूमने

लोकेश मालती प्रकाश
चित्र: प्रोइति रॉय

हिमालय के ऊँचे पहाड़ों पर कई पत्थर रहते थे। उनमें एक नन्हा पत्थर भी था। बाकी सभी पत्थर बड़े-बड़े थे जो हिलते-डुलते नहीं थे। नन्हा पत्थर थोड़ा चंचल था। वह कभी हवा के साथ तो कभी बारिश के साथ इधर-उधर भी सरक जाता था।

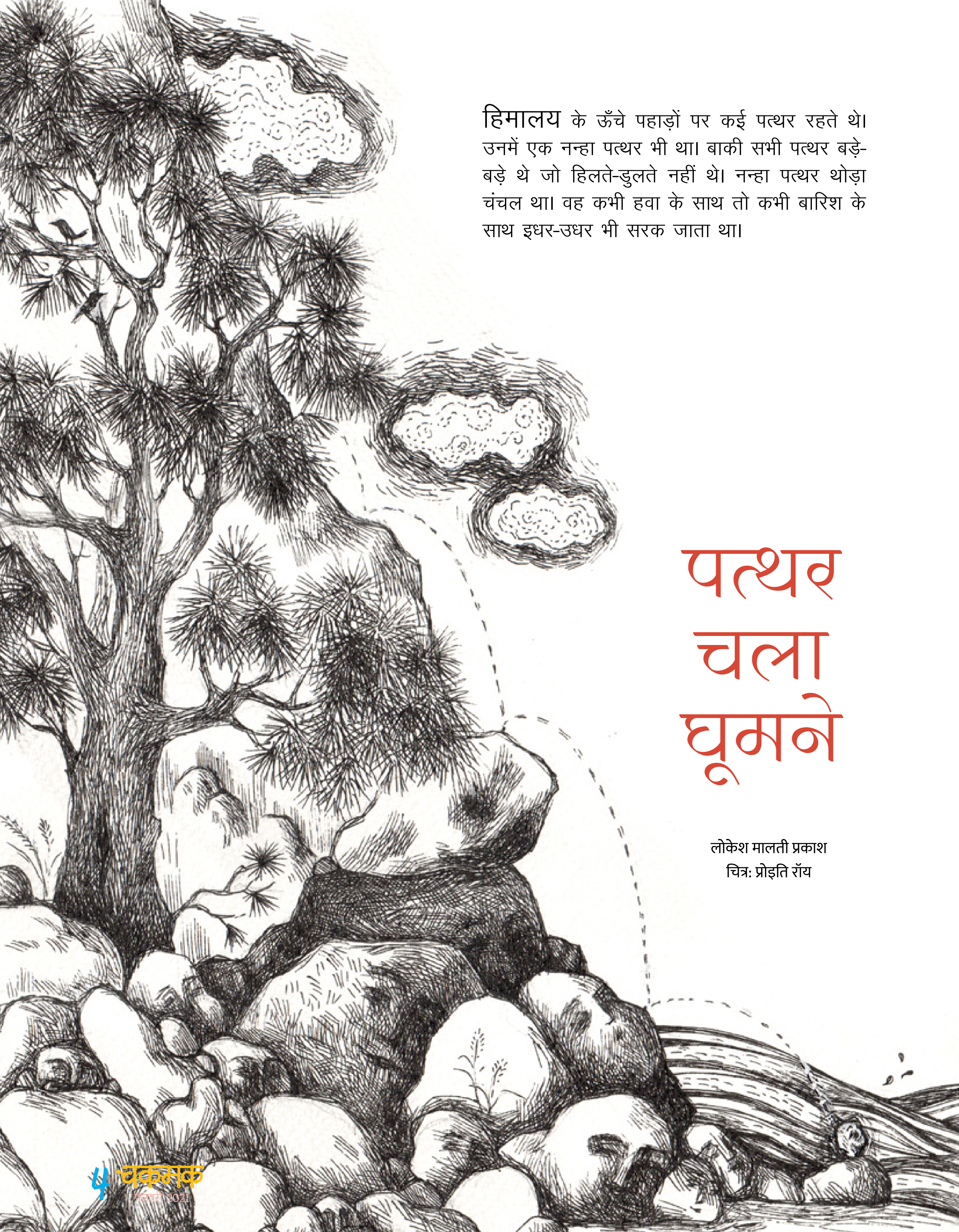

नन्हे पत्थर को वहाँ अच्छा तो लगता था लेकिन वह वहाँ से निकलकर दूरदराज़ की जगहों पर घूमना चाहता था। दूर जगहों के बारे में उसने आते-जाते पक्षियों से कहानियाँ तो खूब सुन रखी थीं, पर देखा कभी नहीं था।

एक दिन नीचे की ओर बहती एक जलधारा वहाँ से होकर गुज़री। उसकी कल-कल, छल-छल आवाज़ नन्हे पत्थर को बड़ी पसन्द आई। धारा ने कहा कि वो दूर देश जा रही है समन्दर से मिलने। यह सुनकर नन्हा पत्थर रोमांचित हो गया। उसने धारा से साथ चलने की बात कही। धारा मान गई तो नन्हा पत्थर भी उसके साथ चल पड़ा।

और भी पत्थर थे जो काफी ऊँचाई से पानी की धारा के साथ आ रहे थे। उनमें धीरे-धीरे चलने वाला एक बड़ा पत्थर भी था। उसने नन्हे पत्थर को बताया कि वह बर्फ के देश से आ रहा है और अपने संगी-साथियों से मिलने मैदानों की ओर जा रहा है।

वैसे वह नन्ही धारा भी बड़ी बदमाश थी। कभी सीधी चलती तो कभी आड़ी-तिरछी। और कभी तो वह सरपट नीचे कूद पड़ती। नन्हे पत्थर को भी खूब मज़ा आ रहा था।

रास्ते में नन्हे पत्थर की मुलाकात छोटी-बड़ी कई नदियों से हुई। उनके साथ झुण्ड के झुण्ड पत्थर चले आ रहे थे।

कई पहाड़ों को पार करने के बाद एक दिन पत्थर ने देखा कि चारों तरफ घने जंगल हैं। तरह-तरह के पेड़-पौधे और झाड़ियाँ। उन सब से बात करने के लिए नन्हा पत्थर उछलकर किनारे की ओर आ गया। पास खड़े एक पेड़ से उसने पूछा कि वह कौन है। पेड़ ने उसे बताया कि वह देवदार है और वहाँ दूर-दूर तक उसके कई साथी-संगी और परिवार के दूसरे पेड़ रहते हैं।

उसने कहा कि वहाँ कई जानवर और पक्षी भी रहते हैं। नन्हा पत्थर उनसे मिलना चाहता था। देवदार ने आवाज़ लगाई तो खूब घने बालों वाला एक बड़ा-सा, अलसाया हुआ जानवर वहाँ आया। नन्हे पत्थर ने उसका नाम पूछा तो उसने बताया कि वो भालू है और देवदार के साथ वहीं रहता है। उसने नन्हे पत्थर को अपने दूसरे साथियों से मिलाने का वादा किया।

वैसे वह नन्ही धारा भी बड़ी बदमाश थी। कभी सीधी चलती तो कभी आड़ी-तिरछी। और कभी तो वह सरपट नीचे कूद पड़ती। नन्हे पत्थर को भी खूब मज़ा आ रहा था।

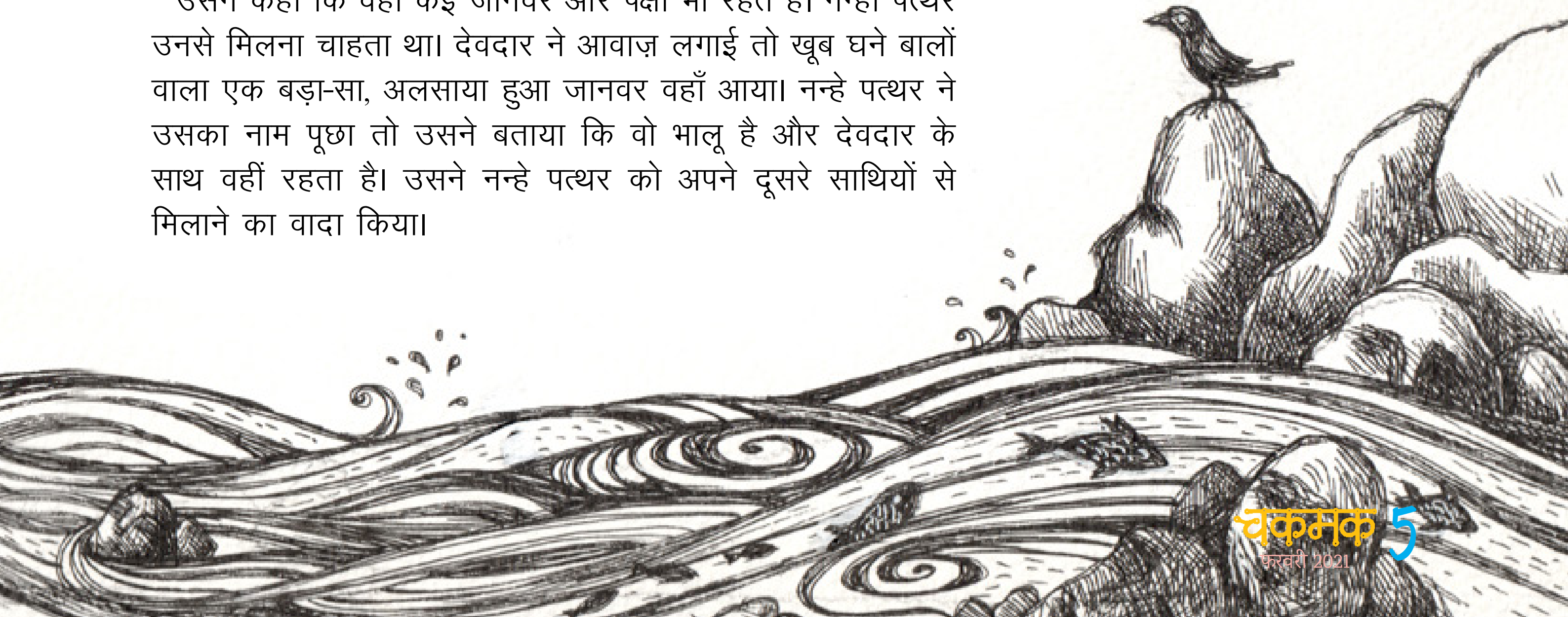

नन्हे पत्थर को देवदार का इलाका बहुत पसन्द आया। उसने सोचा कि वह कुछ दिन वहीं देवदार और भालू के साथ रहेगा। देवदार ने उसे बताया कि वहाँ पास ही इन्सानों की एक बस्ती है जहाँ कई आदमी, औरतें और बच्चे रहते हैं। एक दिन नन्हा पत्थर किनारे बैठा धूप सेंक रहा था कि वहाँ कुछ बच्चे खेलते हुए आ गए। किनारे बैठा नन्हा पत्थर उन्हें बहुत पसन्द आया। उन्होंने आपस में बात की कि क्यों न वे उसे उठाकर घर ले चलें। यह सुनकर नन्हा पत्थर डर गया। वह तुरन्त लुढ़ककर पानी में आ गया और देवदार को नमस्ते कर सरपट आगे दौड़ पड़ा।

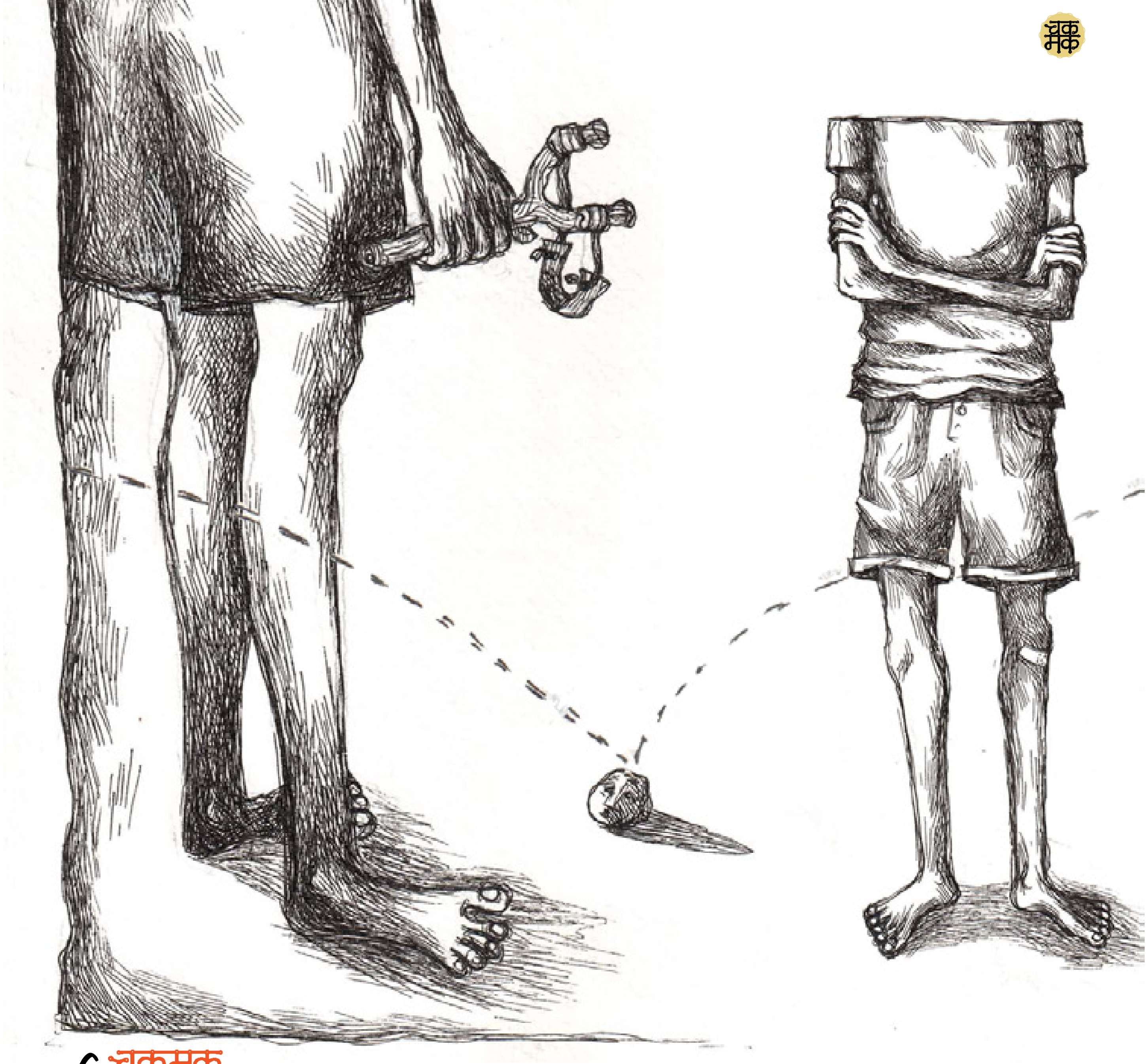

तुम भी जानो

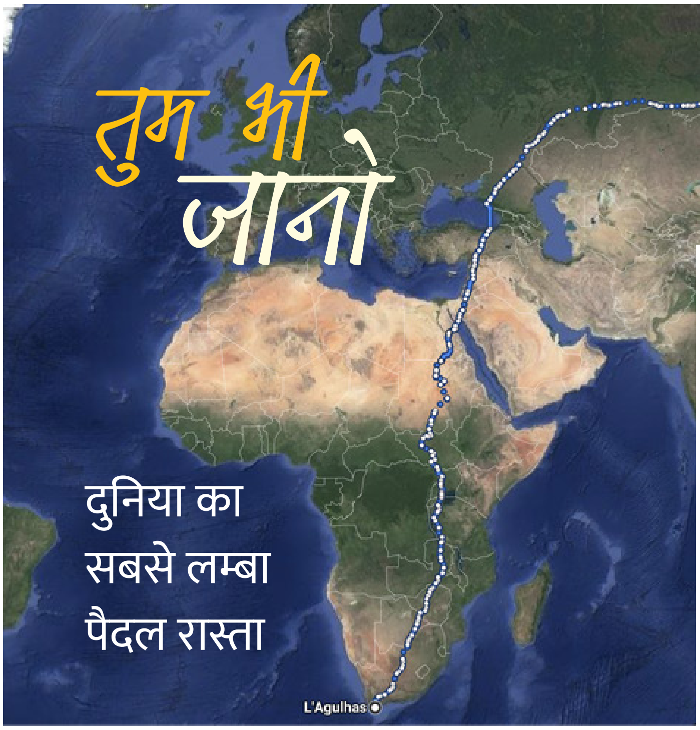

दुनिया का सबसे लम्बा पैदल रास्ता

साउथ अफ्रीका के 'केप टाउन' और उत्तरी रशिया के मगाडन शहर के बीच लगभग 22088 किलोमीटर लम्बा एक रास्ता है। कमाल की बात यह है कि यह पूरा रास्ता पैदल चलकर तय किया जा सकता है। यह दुनिया का सबसे लम्बा पैदल रास्ता है। अगर कोई रोज़ाना 8 घण्टे या 20 किलोमीटर पैदल चले तो इस दूरी को तय करने में लगभग तीन साल लगेंगे। इस रास्ते में आने वाली नदियों को पार करने के लिए पुल मौजूद हैं ताकि हवाई जहाज़ और नाव की मदद न लेनी पड़े।

यह रास्ता 17 देशों और 6 टाइम ज़ोन से होकर गुज़रता है। इस रास्ते में बहुत से खतरनाक जंगल, सुनसान पहाड़ और खूँखार जानवरों का सामना भी करना पड़ सकता है। कई जगहों पर इन्सानी शरीर की कुल्फी जमा देने वाली ठण्ड है, तो कहीं तेल निकाल देने वाली गरमी। कुछ ऐसे देशों से भी होकर गुज़रना होगा जहाँ हमेशा जंग का माहौल रहता है। मज़े की बात है कि लोग ऊँचे-ऊँचे पहाड़ों को चढ़ चुके हैं, समन्दर की गहराइयों में जा चुके हैं, यहाँ तक की चाँद पर भी पहुँच चुके हैं। लेकिन किसी ने अभी तक इस रास्ते पर पैदल यात्रा पूरी नहीं की है।

हायाबुसा-2 की वापसी

जापान में एक खास तरह के बाज़ को हायाबुसा कहते हैं। इसी नाम से जापान का एक स्पेस मिशन भी है – हायाबुसा-2। इसे एक क्षुद्रग्रह (ऐस्टेरॉयड) के सैम्पल पृथ्वी तक लाने के लिए भेजा गया था। क्षुद्रग्रह यानी अन्तरिक्ष में घूम रही चट्टानें, जो सूर्य की परिक्रमा करती हैं। लेकिन ग्रहों की तुलना में यह बहुत छोटी होती हैं। हायाबुसा-2 छह साल बाद रयुगू नाम के एक क्षुद्रग्रह से सैम्पल लेकर आया है। यह क्षुद्रग्रह हमारे सौरमण्डल में मौजूद सबसे प्राचीन चीज़ों में से एक है।

वैज्ञानिकों को लगता है कि ये क्षुद्रग्रह शुरुआती सौरमण्डल के पदार्थ से बना है। इसका अध्ययन करने से सौरमण्डल के बनने और विकसित होने की जानकारी मिल सकती है। साथ ही इससे पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति से जुड़े जवाब भी मिल सकते हैं।

किताबों की दुनिया में जाने का एक रास्ता है किताबों की समीक्षाएँ। कुछ बच्चों ने अपनी पसन्द की किताबों की समीक्षाएँ हमें भेजीं। इनमें से एक समीक्षा हम यहाँ दे रहे हैं।

तुमने भी, अगर कोई किताब या कोई कहानी-कविता पढ़ी हो और उसके बारे में तुम कुछ कहना चाहो तो, हमें लिख भेजना। क्या अच्छा लगा और क्या अच्छा नहीं लगा... हम तुमसे सुनना चाहेंगे।

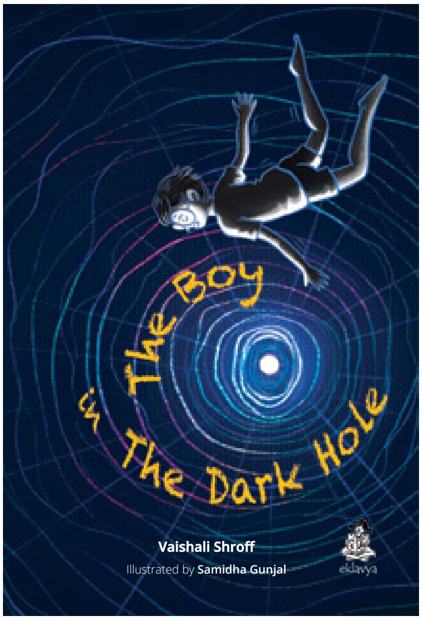

किताब: द बॉय इन द डार्क होल

लेखक: वैशाली श्रॉफ
चित्रकार: समिधा गुंजल
प्रकाशक: एकलव्य प्रकाशन, भोपाल
समीक्षा: नयनतारा वाकणकर
छठवीं, मीराम्बिका फ्री प्रोग्रेस स्कूल, दिल्ली

अनुवाद: मुदित श्रीवास्तव

यह किताब वाकई में जीवन से जुड़ी हुई एक किताब है। किताब 10 साल के एक लड़के के बारे में है, जिसे अपने जीवन में कोई विशेष आकांक्षाएँ नहीं हैं और न ही वह अपने माता-पिता की उम्मीदों पर खरा उतरा। और इसी वजह से अक्सर उसकी कल्पनाएँ उस पर कब्ज़ा करतीं और ऐसी पिक्चर बनातीं जो उसकी वास्तविक दुनिया से ज़्यादा खुशनुमा थीं। और इस तरह वह और दुखी रहने लगा।

एक बार जब उसकी माँ उसे कार्डबोर्ड का ट्यूब देती हैं तो उसे पता चलता है कि कमरे के परदे बन्द करके इस ट्यूब के अन्दर देखने पर अनन्त गहराई का एक ब्लैक होल दिखाई देता है। लड़के को ऐसा लगता है कि वह उस ब्लैक होल में खिंचा चला जा रहा है। रोज़-रोज़ उसे यही लगता। आखिरकार उसने फैसला किया कि उसे किसी से मदद माँगनी चाहिए। उसके दो दोस्त कहते हैं कि जब भी तुम दुखी होते हो तो तुम्हें हमेशा चीजों के सकारात्मक पक्ष को देखते हुए स्थिति को बेहतरीन बनाना चाहिए।

इस किताब में एक समय ऐसा भी होता है जहाँ लड़का कुछ चित्र बनाने की कोशिश करता है लेकिन वह गोदागादी से ज़्यादा कुछ नहीं बना पाता। यह पल बहुत ही भावुक है क्योंकि इससे पता चलता है कि कला के ज़रिए कितना कुछ व्यक्त किया जा सकता है। कला यह नहीं है कि तुम रंगों से सजा एक रेलवे स्टेशन बना दो, बल्कि तुम्हारे द्वारा उकेरी गई हरेक लाइन या घुमाव कुछ कहता है या कोई सन्देश देता है।

इस किताब के चित्रकार ने भी लेखक के शब्दों के बगल में कुछ ऐसी गोदागादी बनाई है। इसे देखकर ऐसा लगता है जैसे चित्रकार खुद वहाँ थी और गोदागादी के माध्यम से उस लड़के के गुस्से, निराशा और उलझनों को व्यक्त कर रही है।

मैं इस किताब को 5 में से 3.5 स्टार देना चाहूँगी। इन 3.5 स्टार्स में मैं यह भी जोड़ना चाहूँगी कि इस किताब में बयान करने की शैली कमाल की है। पढ़ते हुए ऐसा लगता है कि आप कहानी के उसी दृश्य में मौजूद हैं। बॉम्बे (मुम्बई) की सड़कों के खाने के बारे में जो वर्णन किया गया है वह तो बहुत ही अद्‌भुत है। अगर इस बारे में बात करें कि 1.5 स्टार कहाँ छूट रहे हैं तो मुझे लगता है कि यह किताब किसी व्यक्ति की कल्पना को पकड़कर नहीं रख पाती है। हर किताब में अपनी कहानी के ज़रिए एक व्यक्ति पर छा जाने की क्षमता होनी चाहिए। इस किताब के हर चैप्टर में यह क्षमता तो थी कि मेरे दिमाग में उसकी एक तस्वीर बने, हालाँकि सभी चैप्टर आपस में जुड़े हुए नहीं लगते। अक्सर ऐसा होता है कि जब तुम कोई किताब पढ़ते हो तो तुम्हें उससे जुड़ने में थोड़ा समय लगता है, पर धीरे-धीरे तुम कहानी में खो-से जाते हो। पर इस किताब के साथ ऐसा नहीं था। यह कुछ ऐसा था जैसे कि तुम किसी दुकान में घुसे और जल्दी ही वापस आ गए, हालाँकि उस दुकान में बहुत-सी सुन्दर चीज़ें हैं जो तुम देखना चाहोगे, भले ही जल्दबाज़ी में ही सही।

यह किताब 9 से 11 साल के बच्चों के लिए है ताकि वे यह समझ सकें कि भय, दुख और घबराहट के पहाड़ों के इर्द-गिर्द घूमने के बजाए उन पर चढ़ना आखिर क्यों ज़रूरी है।

क्यों क्यों

क्यों-क्यों में इस बार का हमारा सवाल था—

हम खर्राटे क्यों लेते हैं? और बड़ों की तुलना में बहुत कम बच्चे खर्राटे लेते हैं, ऐसा क्यों?

कई बच्चों ने हमें दिलचस्प जवाब भेजे हैं। इनमें से कुछ तुम यहाँ पढ़ सकते हो। तुम्हारा मन करे तो तुम भी हमें अपने जवाब लिख भेजना।

अगली बार के लिए सवाल है—

ऐसी कौन-सी बात है जो तुम्हें दिन में कई बार सुनने को मिलती है और जो तुम्हें बिलकुल भी पसन्द नहीं है, और क्यों?

अपने जवाब तुम हमें लिखकर या चित्र/कॉमिक बनाकर भेज सकते हो।

जवाब तुम हमें chakmak@eklavya.in पर ईमेल कर सकते हो या फिर 9753011077 पर व्हॉट्सऐप भी कर सकते हो। चाहो तो डाक से भी भेज सकते हो। हमारा पता है:

चकमक
एकलव्य फाउंडेशन
जमनालाल बजाज परिसर
जाटखेड़ी, फॉर्चून कस्तूरी के पास
भोपाल - 462026, मध्य प्रदेश

क्योंकि हमारे दिल की धड़कन ज़ोर-से धड़कने लगती है, और हमें ऑक्सीजन नहीं मिल पाती है। इसलिए हमें खर्राटे आते हैं।

ऐश्वर्या, चौथी, एसडीएमसी स्कूल, हौज़ खास, दिल्ली

हम जब ज़्यादा थके होते हैं तो हम खर्राटे लेते हैं। बच्चे कम खेलते हैं और जल्दी सो जाते हैं। इसलिए वो कम खर्राटे लेते हैं। मेरे पापा देर रात में आते हैं। तो वो जब सोते हैं तो खर्र, खर्र की आवाज़ आती है। मेरे दादा-दादी की नाक से भी सोते समय खर्र, खर्र की आवाज़ आती है।

हुदा, दूसरी, अपना तालीम घर, फैज़ाबाद, उत्तर प्रदेश

जब हम बहुत थक जाते हैं तो खर्राटे लेते हैं। बच्चे बड़ों को इतना थका देते हैं कि बड़े खर्राटे लेने लगते हैं। बच्चे तो परेशान करते हैं तो वो तो खर्राटे कम ही लेंगे।

सृष्टि माटकर, नौवीं, सेंट मैरी कॉन्वेंट स्कूल, देवास, मध्य प्रदेश

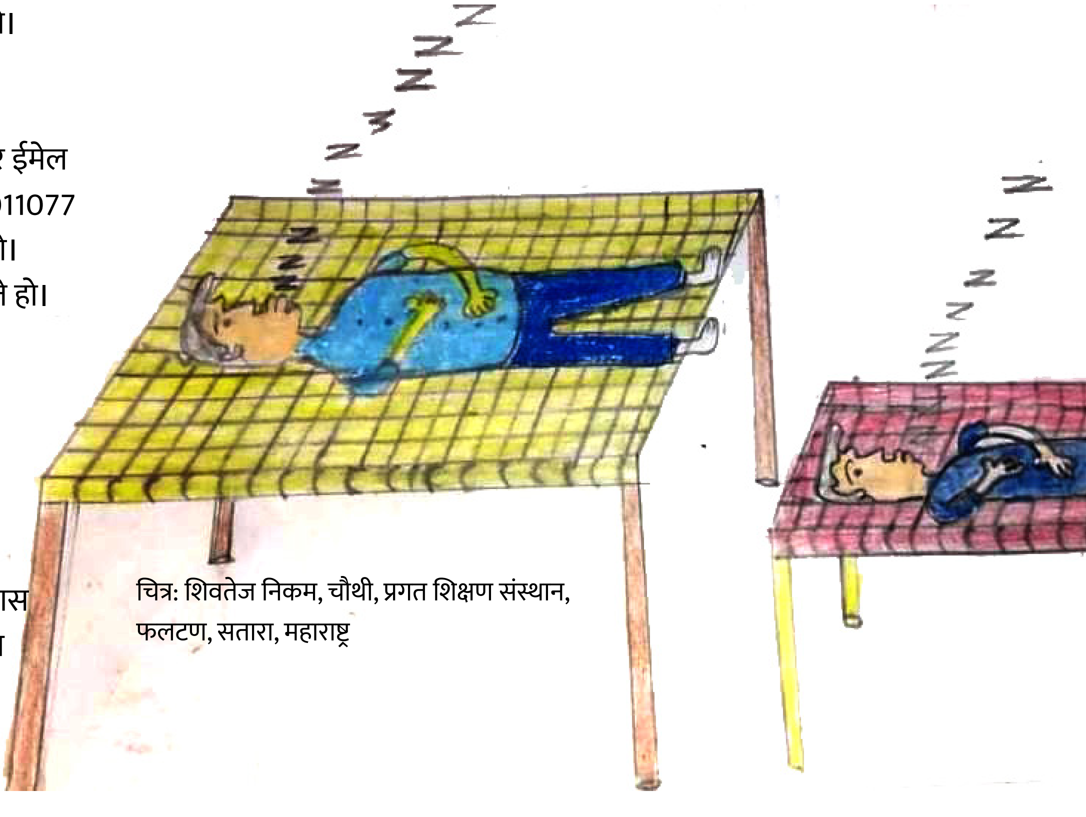

चित्र: शिवतेज निकम, चौथी, प्रगत शिक्षण संस्थान, फलटण, सतारा, महाराष्ट्र

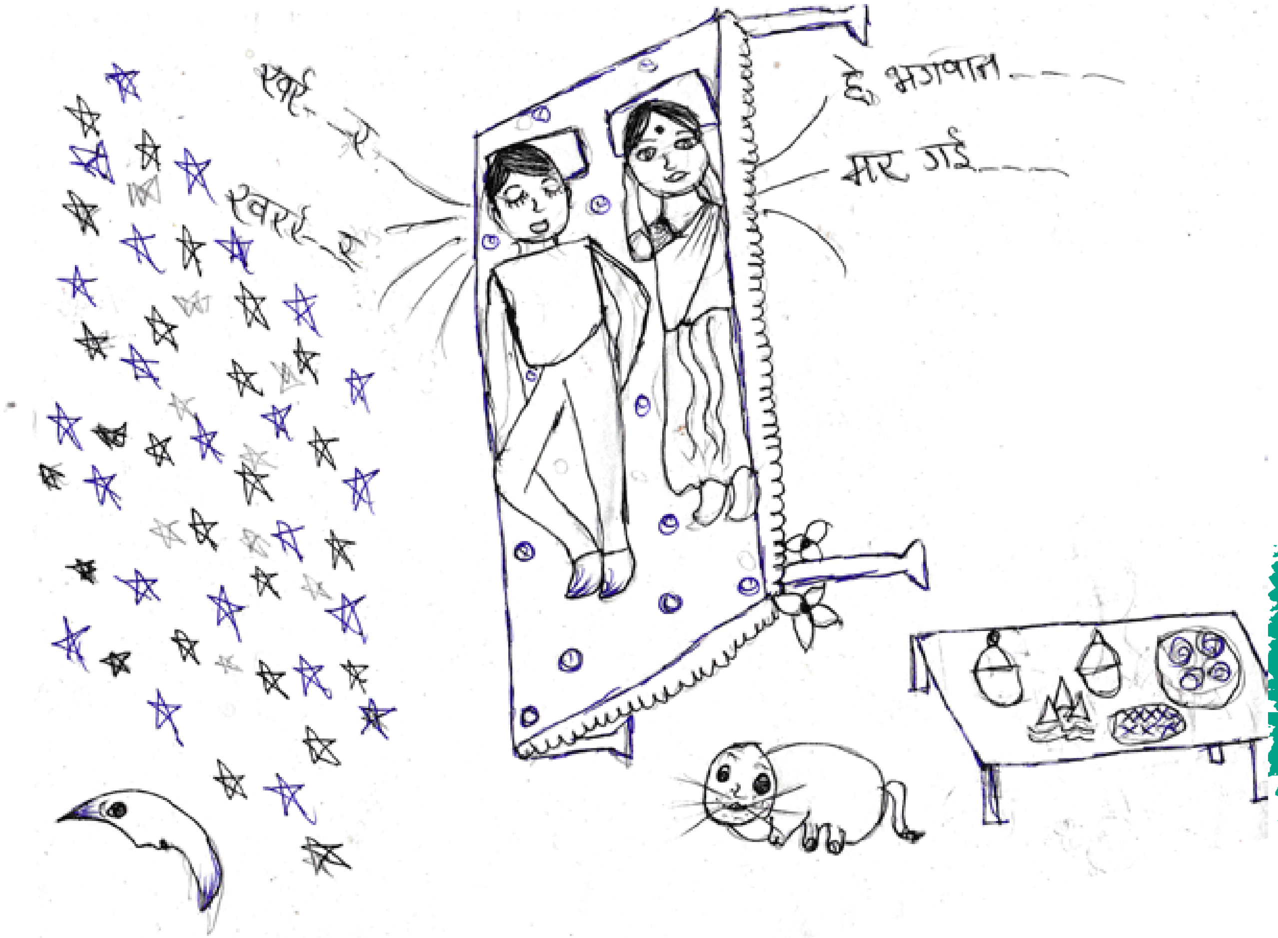

चित्र: किरण कुमारी, छठवीं, ग्राम बड़हुलिया, परिवर्तन सेंटर, सिवान, बिहार

हम खर्राटे इसलिए लेते हैं क्योंकि खर्राटे से हम रात में खुलकर सो सकते हैं। बच्चे कम खर्राटे लेते हैं क्योंकि उनकी आवाज़ पतली होती है जबकि बड़ों की आवाज़ मोटी होती है।

आयुष, पाँचवीं, अज़ीम प्रेमजी स्कूल, मातली, उत्तरकाशी, उत्तराखण्ड

बड़े खर्राटे इसलिए लेते हैं क्योंकि वो दिन भर बहुत सारे काम करते हैं। और हम बच्चे खेलते हैं। बड़े थक जाते हैं क्योंकि उनकी शक्ति अब धीरे-धीरे कम हो गई है। जबकि बच्चों में बहुत सारी शक्ति होती है। गाँव में बोला जाता है कि वो कौवा रहे हैं। वो कौवाते नहीं हैं। उनकी नाक बजती है।

गौरी मिश्रा, चौथी, प्राथमिक विद्यालय धुसाह प्रथम, बलरामपुर, उत्तर प्रदेश

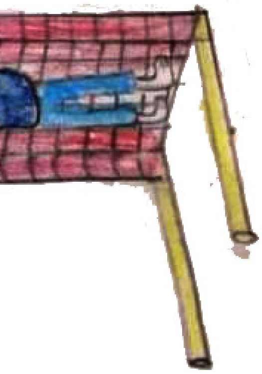

मुझे तो लगता है खर्राटे लेना भी एक भयंकर बीमारी है। या फिर जो लोग राक्षस जैसे होते हैं वह खर्राटे लेते हैं क्योंकि कुम्भकर्ण राक्षस था और वह खर्राटे लेता था। बच्चे तो भगवान का रूप होते हैं इसलिए वह खर्राटे नहीं लेते हैं।

तनवी सोलंकी, चौथी, वेदान्त अकैडमी, मनावर, धार, मध्य प्रदेश

चित्र: सोनी, पाँचवीं, प्रोत्साहन इंडिया फाउंडेशन, दिल्ली

जब छाती पर हाथ रखकर सोते हैं तो खर्राटे आते हैं। साँस की नली में कुछ दिक्कत होने पर खर्राटे आते हैं जिसके कारण दूसरे लोगों को भी सोने में दिक्कत आती है।

प्रिंस कुमार, सातवीं, दीपालया कम्युनिटी लाइब्रेरी, गोलाकुआँ, दिल्ली

हम खर्राटे इसलिए लेते हैं ताकि हम दूसरों को उठाकर... आराम से पूरे बिस्तर पर सो सकें।

सुरभि, नौवीं, सेंट मैरी कॉन्वेंट स्कूल, देवास, मध्य प्रदेश

हमें साँस नहीं आती इसलिए हम खर्राटे लेते हैं। छोटे बच्चे भूल जाते हैं कि उनको साँस नहीं आ रही है इसलिए वो कम खर्राटे लेते हैं।

सौम्या, पहली, अज़ीम प्रेमजी स्कूल, मातली, उत्तरकाशी, उत्तराखण्ड

बड़े बहुत खाना खाते हैं इसलिए उन्हें ज़्यादा खर्राटे आते हैं। और बच्चे कम खाना खाते हैं इसलिए उन्हें खर्राटे नहीं आते हैं।

शैलेन्द्र राठौर, आठवीं, केरला पब्लिक स्कूल, देवास, मध्य प्रदेश

मुझे लगता है कि बड़े लोग सोते हुए भी हम बच्चों को डाँटते रहते होंगे। इसलिए वो खर्राटे से अपने पास सोते हुए बच्चे को डाँटते होंगे। और बच्चा डाँट खाकर रोता होगा। इसीलिए बड़े लोगों के खर्राटे तेज़ होते होंगे बच्चों के मुकाबले।

सिद्धि रत्नावत, नौवीं, केरला पब्लिक स्कूल, मध्य प्रदेश

जब आदमी खेतों में सबसे ज़्यादा काम करते-करते थक जाते हैं तो रात में सोते ही थकान पूरी होती है। तो खर्राटे की आवाज़ आती है। बच्चे इसलिए खर्राटे नहीं लेते क्योंकि वो खेतों में काम करने नहीं जाते हैं।

रोहित श्रीवास्तव, सातवीं, ग्राम गोठी, परिवर्तन सेंटर, सिवान, बिहार

छोटे लोगों का बचपन

सी एन सुब्रह्मण्यम्
चित्र: भारती तिहोंगर

बड़े लोग बचपन से ही अपने बड़प्पन की पहचान देने लग जाते हैं, ऐसा हम उनकी जीवनियों से समझ पाते हैं। तमिल में एक कहावत है, 'अंकुर से ही हम फसल का अन्दाज़ा लगा सकते हैं'। बहरहाल मैं अपने बचपन को याद करता हूँ तो मुझे साफ हो जाता है कि मैं बचपन से ही नालायक होने की पहचान देते रहा। मुझे अभी भी याद है एक बार तीसरी कक्षा की गणित शिक्षिका मुझसे त्रस्त होकर झल्लाईं, "जितने सवाल देती हूँ, सभी को गलत हल कैसे कर लेते हो?" यह कलकत्ते की बात है।

फिर हम जबलपुर आ गए जहाँ सब लोग हिन्दी बोलते थे। मुझे हिन्दी बिलकुल नहीं आती थी। तो एक तमिल गांधीवादी ने मुझे हिन्दी सिखाने का बीड़ा उठाया। बेचारे वे भी बहुत त्रस्त होकर एक दिन मेरे दादाजी से बोले, "साहब इसको हिन्दी नहीं आती है, सो ठीक है। मैं तमिल की मदद से हिन्दी सिखा सकता हूँ। मगर इसे तमिल भी ठीक से नहीं आती है। अँग्रेज़ी की मदद से सिखाने की कोशिश की तो पता चला कि इसे तो अँग्रेज़ी भी नहीं आती है। मैं इसे कैसे सिखाऊँ समझ में नहीं आ रहा है।"

फिर हम नागपुर गए। पिताजी की नौकरी कुछ ऐसी थी कि साल दो साल में उनका तबादला होते रहता था। नागपुर में मुझे केन्द्रीय विद्यालय में सातवीं कक्षा में दाखिला मिला। वहाँ कक्षा की व्यवस्था कुछ ऐसी थी कि होशियार बच्चे आगे बैठते थे और कमज़ोर बच्चे पीछे। वैसे जिन्हें कमज़ोर माना जाता था, उनकी बड़ी माँग और इज़्ज़त थी। उनमें से कुछ अच्छे कलाकार थे, तो कुछ अच्छे खिलाड़ी थे जो खेल के मैदान में अव्वल थे। सुबह की सभा और ड्रिल आदि में उनकी अहम भूमिका होती थी। जो बच्चे न होशियार थे, न और किसी काम के थे वो बीच में बैठते थे और मेरी जगह उनके बीच में थी। बेहद साधारण होना ही उनके भाग्य में था।

मुझे अभी भी याद है एक बार तीसरी कक्षा की गणित शिक्षिका मुझसे त्रस्त होकर झल्लाईं, "जितने सवाल देती हूँ, सभी को गलत हल कैसे कर लेते हो?"

बड़ों का बचपन

मगर इस जंगल की सबसे आकर्षक बात थी बेर के पेड़। उन पेड़ों में सर्दियों में बेहद मीठे और बड़े-बड़े बेर लगते थे। बसन्त में वे सूखकर झड़ने लगते और ज़मीन पर मीठे, सूखे बेर बिछ जाते थे। इन्हें हम प्यार से 'सुखमिट' बेर कहते थे।

इस नाकाम माहौल से रोज़ कुछ समय के लिए भाग निकलने का मौका मुझे उसी स्कूल में मिला। इसी के बारे में कुछ लिखना चाहता हूँ।

हमारी शाला तेलंखडी झील के पास की सेमिनरि पहाड़ियों में थी। वहाँ वायुसेना वालों की एक कालोनी भी थी। आसपास काफी लम्बा-चौड़ा जंगल था। उसमें बरसाती नाले भी बहते थे जो झील में जा मिलते थे। बरसात में खूब झाड़-झंखाड़ हो जाते थे और दिल को कैद करने वाली खुशबू फैल जाती थी। पलाश के बहुत से पेड़ थे जो होली के समय फूलों से लद जाते थे। झील के पास जाओ तो खेत और आम के बगीचे होते थे जिनमें अप्रैल में ही कैरियाँ लगने लगती थीं।

मगर इस जंगल की सबसे आकर्षक बात थी बेर के पेड़। उन पेड़ों में सर्दियों में बेहद मीठे और बड़े-बड़े बेर लगते थे। बसन्त में वे सूखकर झड़ने लगते और ज़मीन पर मीठे, सूखे बेर बिछ जाते थे। इन्हें हम प्यार से 'सुखमिट' बेर कहते थे। उसी समय झाड़ियों में कामूनी नाम का खट्टा-मीठा फल लगता था। तुम कल्पना कर सकते हो कि सातवीं कक्षा के किसी बच्चे को यह जंगल कितना आकर्षित करता होगा। मगर स्कूल से छुटकारा कैसे पाएँ कि जंगल में घूमें?

दोपहर को लंच के लिए लम्बी छुट्टी होती थी लगभग चालीस मिनट की। हम तीन-चार दोस्त चुपके-से स्कूल के बाड़े में एक गैप से बाहर निकल जाते थे और जंगल में दौड़ते हुए इधर-उधर फैल जाते थे। नाले के पास एक खास जगह हमारा ठिकाना होती थी जहाँ एक झुका हुआ छायादार पलाश का पेड़ एक गुफा का एहसास देता था। वहाँ जाकर हम अपना टिफिन खाते थे

और आसपास घूमते थे। जिस दिन पता लगता था कि लंच के बाद वाले पीरियड के शिक्षक छुट्टी पर हैं तो मज़ा दुगना हो जाता था और हम खूब देर जंगल में दूर तक घूमते रहते थे।

धीरे-धीरे मुझे समझ में आया कि हमारी टोली के लोग मुझे अपना लीडर मानते थे और सोचते थे कि मेरे साथ रहेंगे तो जंगल में रास्ता नहीं भटकेंगे। इसके पीछे एक राज़ था। बीच जंगल में एक मोटी, काली पाइप लाइन बिछी थी और उसके साथ-साथ चलते रहो तो आप आसानी से वापस लौट सकते थे। बस उसी पाइप के इर्द गिर्द हम दूर तक चले जाते थे, खासकर बेर के मौसम में। बेरों को बीन-बीनकर अपने जेबें और टिफिन बॉक्स को भरते जाते थे। उन दिनों किसी के पास घड़ी नहीं होती थी तो अन्दाज़ से समय का हिसाब लगाकर दौड़कर वापिस स्कूल आ जाते थे। अक्सर लेट हो जाते थे तो काफी मशक्कत करनी पड़ती थी और डाँट भी खानी पड़ती थी। लेकिन जंगल में जाने के आनन्द के सामने यह चन्द मिनटों की परेशानी क्या थी! वैसे उन दिनों मास्टर लोग इन बातों को लेकर बहुत टेंशन नहीं लेते थे।

उन जंगलों, नालों और झाड़ियों से हमने बहुत कुछ पाया। पौधों, मौसमी लताओं, पत्तों, फूलों, टहनियों, छालों, कीड़ों और पक्षियों से एक अजीब-सी पहचान, दोस्ती और अपनापन पैदा हुआ। उन्हीं जंगलों में बेहद खूबसूरत रंगीन पत्थर और क्रिस्टल्स मिलते थे। हम सभी दोस्त पत्थर इकट्ठा करने लगे थे और घर में जाकर उन्हें सजाते थे, उनके रंग-रूप के आधार पर जमाकर रखते थे। सबसे बड़ी बात तो यह थी कि बेकार और बेहद सामान्य होने से कुछ देर हम बच पाते थे। वैसे यह बात किसी को शब्दों से समझाना बहुत मुश्किल है।

चक मक

अबाबीलें

गौरांशी चमोली

शाम ढलते ही
मोहल्ले के तार भर गए हैं
झुण्ड में मानो जंग का माहौल हो
मालूम पड़ता है बिस्तर के लिए
छीना-झपटी हो रही है
गौरैयों के अड्डों पर इन दिनों
अबाबिलों का कब्ज़ा है।

चक मक

कतरनों से कलाकारी

शशिकला नारनवरे और मेघा चारमोड़े

क्लास रूम में कपड़ों की कतरन से चित्र बनाते जीवन शिक्षा पहल के बच्चे

हम अपने विचारों को बोलकर, लिखकर, संकेतों और चित्रों द्वारा व्यक्त करते हैं। इसी अभिव्यक्ति को और बढ़ाने के लिए हमने मुस्कान संस्था द्वारा संचालित जीवन शिक्षा पहल के तहत कक्षा तीसरी व चौथी के बच्चों के साथ एक गतिविधि की।

हमने बच्चों के साथ मिलकर *मुकुन्द और रियाज़* किताब पढ़ी और उसके चित्रों पर चर्चा की। जैसे कि किताब में क्या अलग है? क्या खास बात है? चित्र कैसे हैं?

इस किताब के सभी चित्र कपड़ों की कतरन से बने थे, जो कि आम तौर पर देखने को नहीं मिलते। बच्चों की इच्छा थी कि वे भी ऐसे चित्र बनाएँ।

अगले ही दिन सबने मिलकर ज़रूरी सामान की एक लिस्ट बनाई – कैंची, ड्राइंग शीट, पेंसिल, पैन, काला ऊन, फेविकॉल, बिन्दी, अलग-अलग तरह के कपड़ों की कतरन जैसे आँख बनाने के लिए सफेद कपड़ा, पेड़ बनाने के लिए हरा कपड़ा, बाल बनाने के लिए काले कपड़े।

बाकी सब सामान तो हमारे पास था। बस हमें रंग-बिरंगे कपड़ों की बहुत सारी कतरनें जुगाड़ने की ज़रूरत थी। इसके लिए दर्ज़ी की दुकान से बेहतर जगह भला क्या हो सकती है। सब अपनी-अपनी गली के दर्ज़ी से रंग-बिरंगे कपड़ों की कतरन ले आए।

बच्चों ने यह काम समूह में किया ताकि कपड़ा काटने और चिपकाने में एक-दूसरे की मदद मिल सके। पहले कागज़ पर चित्र बनाए और फिर कतरनें चुनीं। किसी ने फ्रॉक बनाने के लिए एक कपड़े का इस्तेमाल किया तो किसी ने दो या दो से ज़्यादा। चयन के बाद कपड़े पर पेंसिल या पैन की मदद से ड्राइंग बनाई गई, जैसे शर्ट चाहिए तो शर्ट की ड्राइंग

चित्र: रेणुका, स्वाति, मुस्कान और आलिया
मुस्कान संस्था, भोपाल, मध्य प्रदेश

चित्र: खनक और पार्वती, मुस्कान संस्था, भोपाल, मध्य प्रदेश

बनाई। इसके बाद उन्हें कैंची से काटा। फिर फेविकॉल लगाकर चिपका दिया। फेविकॉल कम मात्रा में लिया ताकि कपड़ा बहुत ज़्यादा गीला न हो वरना चिपकाने में दिक्कत होती।

बाल बनाने के लिए किसी ने ऊन का इस्तेमाल किया तो किसी ने कपड़े का। बिन्दी बनाने के लिए भी कुछ ने बिन्दी चुनी तो कुछ ने कागज़ की गोल कतरन। आँख, मुँह, नाक, कान बनाने और शरीर में रंग भरने के लिए स्केच पैन का उपयोग किया। रंग-बिरंगे कपड़ों से बने ये चित्र काफी अनोखे लग रहे थे।

तुम भी बनाकर देखना कितना मज़ा आता है। और अपने बनाए चित्र चकमक के साथ ज़रूर साझा करना।

एकलव्य प्रकाशन की नई किताब

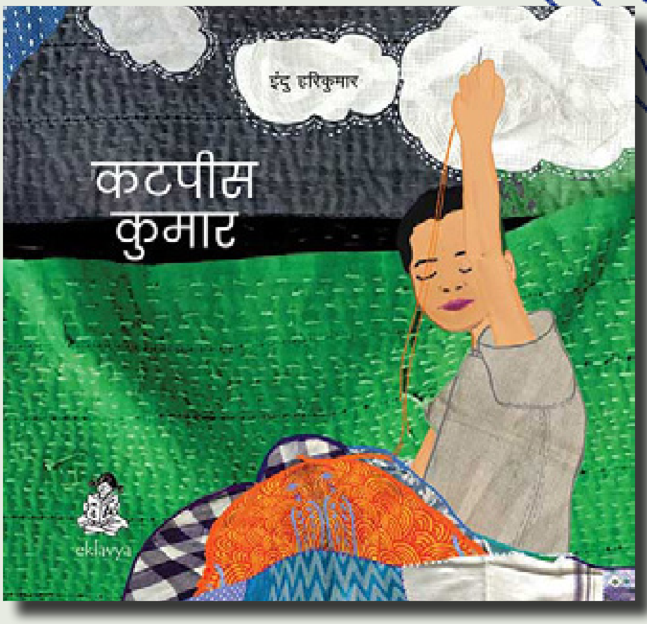

कुमार यह सुनकर बहुत खुश है कि जल्द ही उसके परिवार में एक नया मेहमान आने वाला है। वह उस नए मेहमान के लिए कुछ बनाना चाहता है। वह सोचता है, खूब सोचता है और तय करता है कि वह बनाएगा...

इन्दु हरिकुमार एक कलाकार हैं। बच्चों के लिए कहानियाँ बुनती हैं और अपनी किताबों का चित्रांकन भी करती हैं। अपने चित्रों में वे कपड़ों की कतरने, सिलाई और रंगों का इस्तेमाल कोलाज के रूप में करती हैं। इन्दु की यह किताब हिन्दी के साथ-साथ अँग्रेज़ी में भी उपलब्ध है।

अपनी प्रति ऑर्डर करने के लिए सम्पर्क करें -
0755 297 7770-71-72-73
books@eklavya.in

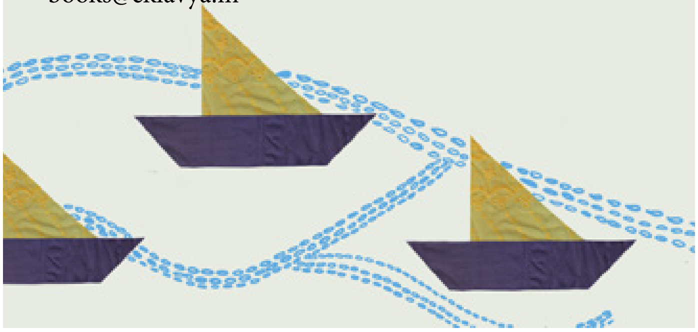

पप्पू भाईजान और कटी पतंग

अनिल सिंह
चित्र: प्रशान्त सोनी

शान्ति मार्ग महल्ले का मुसलमान टोला नदी से लगा हुआ था। थोड़ा हटकर कुछ ढीमरों के घर थे और चन्द कचेरों के। पर ज़्यादातर घर मुसलमानों के ही थे। सो उसे मुसलमान टोला कहते थे हम। कोई बीस-बाईस परिवार थे मुसलमानों के। अस्फाक का परिवार भी उनमें से एक था।

अस्फाक खान उर्फ 'पप्पू'। महल्ले भर के लिए वह पप्पू भाईजान था। अम्मा उसे लाड़ से मुसलमान पप्पू कहतीं। महल्ले में तेली पप्पू और सुनार पप्पू भी थे। अस्फाक मुझसे एक कक्षा पीछे था। पर हम थे अलग-अलग स्कूल में। वह कोलियरी के स्कूल में पढ़ता था क्योंकि उसके पिताजी कोयला खदान के कर्मचारी थे। मैं सरकारी हाई स्कूल में पढ़ता था। कोई दिन ऐसा न था जब हम मिलते न हों। नीम के नीचे बारामासी जमघट था। मौसम के हिसाब से चिरंगा, गिल्ली-डण्डा, गड़ा गेंद, लत गेंद, पतंगबाज़ी और रेत के घरौन्दे से लेकर जंजीर, नदी-पहाड़, खो-खो और रात में टीप-रेस तक हम वहीं खेलते। मेरा घर नज़दीक होने के कारण सबके लिए वह रिटाइरिंग रूम था। पानी पीना, सुस्ताना, मरहम पट्टी करना सब वहीं बाहर वाले बरामदे में होता। गर्मियों की दुपहरियों में छाँव का एकमात्र पक्का इन्तज़ाम था वह बरामदा।

महाशिवरात्रि के लिए शर्माईन बुआजी की छत से बेलपतरी तोड़ लाना, बच्चों में छोटी या बड़ी माता निकलने पर नीम के पानी का उतारा करने के लिए गज्जू के बाड़े में चढ़कर नीम की पत्तियाँ तोड़ लाना, हरतालिका तीज की पूजा में बँधने वाले फुलहरा के लिए टोकनी भर फूलों का इन्तज़ाम करना। ऐसे तमाम मुश्किल कामों के लिए हम पप्पू भाईजान

के भरोसे थे। हमारी पूजा, व्रत, त्योहारों में अस्फाक के शामिल होने से उनका कुछ न बिगड़ा था।

घर में रखी झालरें (सीरीज़) दीवाली पर अस्फाक का इन्तज़ार करतीं। मैं अस्फाक का हमउम्र था पर अस़्फ़ाक सा हुनर न था मुझमें। इसलिए बाबूजी ने कभी मुझे मुँडेर पर चढ़ाने की न सोची थी। अस्फाक इस तरह के काम में तनिक न हिचकता। वह पक्का नमाज़ी भी था। नमाज़ का वक्त होने पर सिर पर रुमाल बाँधता और मस्ज़िद की तरफ दौड़ जाता। वापस आकर फिर काम में लग जाता।

वह घर भर का लाड़ला था। लेकिन बाई (दादी) उसे छूती न थीं और वह भी इस बात की पूरी कदर किया करता। पर ऐसा भी नहीं कि बाई उसे काम न सौंपती थीं या वह बाई का कोई काम न करता था। बाई उसके लिए थैली और पैसा वहीं देहरी पर रख देतीं और वह उनके लिए बाज़ार से पान ले आता, बारीक सुपारी कटवा लाता, किसी के भी आँगन से फूल-पत्ती तोड़ लाता। सब कुछ लाकर देहरी में रख देता था। और बाई बाद में वहीं से उठा लेतीं। अपने काँसे के लोटे से सामान पर थोड़ा पानी छिड़कना वह कभी न भूलतीं। अस्फाक कभी-कभार घर में चाय पी लेता, नाश्ता करता, पूजा-परसाद में शामिल भी होता। हाँ, पर चौके के नजदीक आने की इजाज़त न थी उसे। वह भी समझता था इसे, और खूब खयाल रखता था। सब्ज़ी-भाजी, किराने का सामान, गैंती-फावड़ा, लोटा-गिलास, या मग्गा-बालटी सब कुछ उठाने-धरने की एक अघोषित हद बनी थी घर में।

फरवरी का महीना शुरू हुआ था। दोपहर के बाद का वक्त था। आसमान में रंग-बिरंगी पतंगें चकरघिन्नियाँ हो रही थीं। बहरा मैदान की तरफ से किसी का लाल-पीला दुरंगा डग्गा दर्ज़नों पतंगें काटकर शान से तना हुआ था। छोटी-मोटी पतंगें तो पास भी न फटक रही थीं। इधर मुसलमान टोला से रासिद चच्चा भी अपने हरे डग्गे को उसी तरफ ढील दिए जा रहे थे। देखने वालों की नज़रें अब आसमान पर थीं।

दो पतंगबाज़ों का मुकाबला होने जा रहा था। दुरंगा ढील खाकर नीचे की तरफ बाज़-सा झपटा। पर रासिद चच्चा ने भी कोई कच्ची गोलियाँ न खेली थीं। उन्होंने फटाफट अपने डग्गे को दूसरी तरफ खेंच लिया। पर यह क्या दुरंगा एकदम ऊपर उठा और ढील खाकर सीधा हरे डग्गे के सद्दे से जा लड़ा। दुरंगे का माँझा हरे के सद्दे पर भारी पड़ा। रासिद चच्चा ने नज़ाकत को समझते हुए ढील बढ़ाई पर दुरंगा छप्पाते हुए सद्दे पर लिपट गया।

देखने वालों की साँसे थम गईं। रासिद चच्चा ढील दिए जा रहे थे। लड़ती हुई पतंगें अब बहरा मैदान के ऊपर आसमान में थीं। अब सिर्फ डोर की ताकत ही फैसला करने वाली थी। बहरा मैदान से पतंगबाज़ ने दुरंगे को थोड़ी ढील देकर एक ठुमका दिया और रासिद चच्चा का डग्गा सद्दे से कटकर खुले आसमान में तैर गया।

तमाशबीनों में भगदड़ मच गई। हर कोई रासिद चच्चा की पतंग को लूटना चाहता था। अस्फाक के लिए तो अब ये आन-बान और शान का मामला था। वह अपनी छत से जल्दी-जल्दी नीचे उतरा और शान्ति मार्ग के मैदान में आ गया। बिजली के खम्भों को पार करती हरी पतंग लहराती हुई इसी ओर चली आ रही थी। पतंग लूटने वालों का झुण्ड कटिया डण्डी लेकर इसी तरफ भागा आ रहा था। गुरु महाराज की छत के ऊपर से होती हुई पतंग शारदा दादू की छप्पर पर आई। अब तक अस्फाक ने गणित लगा लिया था कि पतंग मेरी छत पर ही आएगी। अस्फाक को समझते देर न लगी कि उसने मैदान मार लिया है। मेरे घर की छत उसके लिए पराई न थी। लड़कों का हुजूम तो गुरु महाराज और शारदा दादू के घरों के बीच वाली गली में रुक गया। पर अस्फाक मेरे घर की तरफ लपका।

कुछ और बच्चे भी दौड़े लेकिन अस्फाक ही था जो दौड़कर बरामदा पार करते हुए सीधा घर के अन्दर घुसा। दहलान से होता हुआ घिनौची पार करके

जल्दी-जल्दी छत की सीढ़ियाँ चढ़ने लगा। अस्फाक की नज़र पतंग और उसकी सरसराती डोर पर थी। उसे बिलकुल भी अन्दाज़ा न था कि इस धूमधड़ाके से बेखबर बाई छत पर बैठी हुई मूँग की बड़ियाँ समेट रही थीं। अस्फाक लगभग उन्हें धक्का-सा देता हुआ बड़ियों के लिए बिछाई गई चादर के ऊपर से होकर गुज़रा। कनस्तर को लात लगी तो कनस्तर पलट गया, समेटी हुई बड़ियाँ बिखर गईं। पर बिजली की सी फुर्ती दिखाते हुए उसने मुँडेर के पास से सरकती डोर को पकड़ ही लिया।

इधर बाई ने जब देखा कि यह तूफान अस्फाक था तो गुस्से में गालियाँ देने लगीं। अस्फाक भी अब जाकर सँभल पाया था। उन गालियों के बीच अस्फाक ने सुना बाई चिल्ला रही थीं, “सब किरिस्तान कर दई।” बाई अब उसकी तरफ देखकर चिल्ला रही थीं और अस्फाक कटी पतंग लूटकर चुपचाप अपराधियों की तरह खड़ा था। यह सब इतनी अचानक हुआ कि उसे कुछ समझ न आया। बाई लगातार गालियाँ दिए जा रही थीं। उसने झुककर कनस्तर सीधा करना चाहा पर बाई और भी ज़ोर-से चिल्लाईं, “हाथ न लगाइए वाहे, चल भग इते से।”

अस्फाक चुपचाप सीढ़ियाँ उतर आया। घर के बाहर लड़कों की झोंप लगी थी। कोई और मौका होता तो अस्फाक विजेता की तरह पेश आता,पर उसका मुँह उतरा हुआ था। लड़कों के बीच आकर उसने लूटी हुई पतंग हवा में उछाल दी। उछाली हुई पतंग लूटने लड़कों का हुजूम दूसरी तरफ लपका। उन्हें अनदेखा कर अस्फाक अपनी घर की तरफ चला गया।

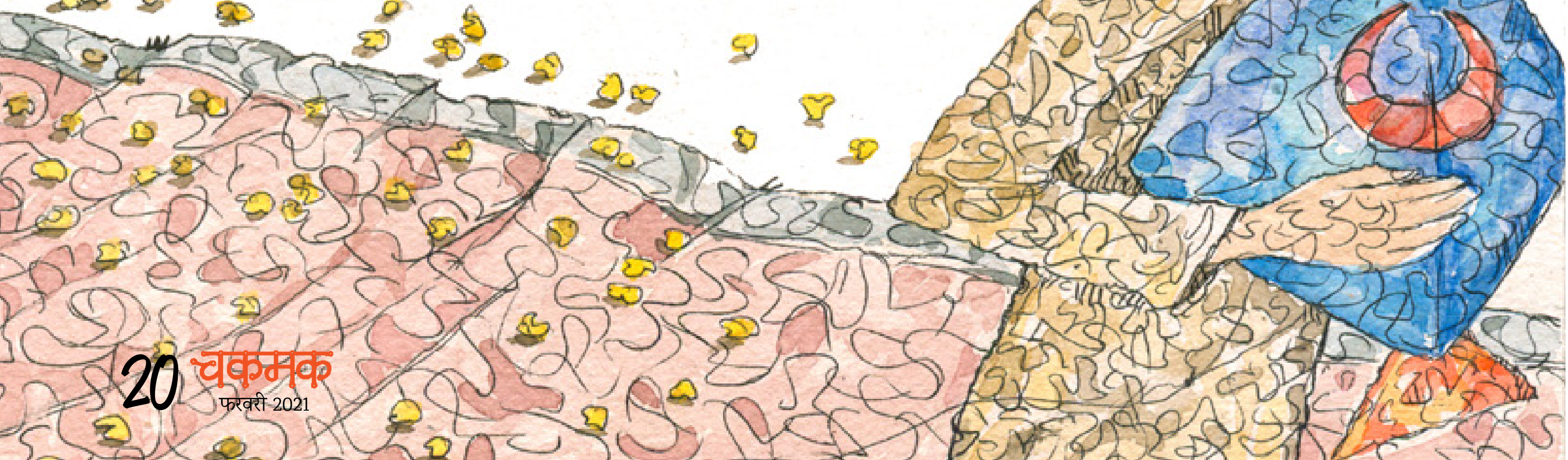

तीन महीने गुज़र गए। अस्फाक घर की तरफ नहीं आया। मुझसे भी कटा-कटा सा रहा। फिर परीक्षाएँ आ गईं और मिलना-जुलना नहीं हुआ। गर्मियों की छुट्टियाँ लग गईं। नीम के नीचे का मैदान दिन-रात के लिए गुलज़ार हो गया। पर अस्फाक नदी की तरफ ही ज़्यादा वक्त गुज़ारता। हमने उसे कहा, “यार अब तो छुट्टियाँ भी हो गईं हैं। तू नीम के नीचे खेलने नहीं आया।” उसने कहा, “घर में काम था। एक-दो रोज़ में आऊँगा।” अम्मा ने पूछा भी, “कोई झगड़ा हुआ है क्या तुम लोगों का” मैंने कहा “नहीं तो।” “तो फिर पप्पू आ काहे नहीं रहा है इस तरफ”, अम्मा ने पलटकर पूछा। मैंने कहा, “पता नहीं, कह रहा था घर में कुछ काम है आजकल।” अम्मा को छत वाली घटना पता न थी। पर मुझे सब पता था।

फिर बारिश आ गई। गरज के साथ छींटे पड़े। दो-तीन दिन तक ताबड़तोड़ पानी बरसा। तूफान भरी रातें थीं। बीच-बीच में बिजली भी जाती रही। दिन ढले राम मन्दिर तक जाना, दिया जलाना, घड़ी दो घड़ी पण्डित जी के पास बैठना और फिर परसाद लेकर आना बाई का रोज़ाना का क्रम था। इधर बारिश के कारण कई रोज़ से जा न पाई थीं। वैसे तो बाई की कमर झुक गई थी, आँखें कमज़ोर हो चली थीं। पर हौंसला-हिम्मत अभी भी ज़बरदस्त था। अपना काम खुद करतीं। अटारी और छत उनका अपना संसार था।

आज सुबह से बारिश थमी थी। दोपहर धूप भी खिली थी। पूरनमासी का दिन था। सीधा-सामान लेकर बाई दिन का उजाला रहते ही मन्दिर के लिए निकल गई थीं। थोड़ी ही देर में काले बादल घिर आए। चमक और गरज के साथ बारिश शुरू हो गई। एक-डेढ़ घण्टे से मूसलाधार बरसात हुई जा रही थी। बिजली भी गुल हो गई। काफी देर हो गई थी। बाई मन्दिर से लौटी न थीं। रास्ता भी ऊँचा-नीचा था। पहले भी एकाध बार नाली पार करते समय बाई गिर चुकी थीं।

अम्मा ने छाता और टॉर्च लेकर मुझे मन्दिर जाने को कहा। सब तरफ घुप्प अँधेरा था। सिर्फ घरों के दरवाज़ों से चिमनियों की रोशनी बाहर आ रही थी। मैं बनिया दद्दा के दुकान के सामने वाली गली से गया। जगह-जगह पानी के डबरे भरे हुए थे। बूँदाबाँदी अब लगभग बन्द हो चुकी थी पर बिजली अभी भी गुल थी। पूरनमासी की रात होते हुए भी कोई रोशनी न थी। गहरे काले बादलों की चादर लपेटे चाँद जाने कहाँ दुबका था। मुझे अब बाई की चिन्ता हो चली थी। कहीं निकल न पड़ी हों घर के लिए।

मन्दिर में पण्डित जी के लड़के मदन महाराज ने बताया कि बाई तो कब की चली गई हैं। मैं कुछ दूर छोटी बाज़ार की तरफ आगे बढ़ा। फिर मुझे खयाल आया कि मैं तो बनिया दद्दा के सामने वाली गली से आया हूँ। पर हो सकता है बाई राम विशाल की चक्की तरफ वाले रास्ते से घर गईं हों, क्योंकि बारिश और अँधेरे को देखते हुए वह ज़्यादा ठीक रास्ता था। मैं तेज़ कदमों से उस तरफ बढ़ता गया।

टॉर्च की रोशनी डालकर मैं हर आने-जाने वालों को देख लेता था कि कहीं बाई तो नहीं। रास्ते में बिहारी दद्दा मिले तो मैंने पूछा भी कि बाई दिखीं हैं क्या? उनने बताया कि हाँ कोई लड़का उनका हाथ पकड़े घर तरफ पहुँचाने लिए जा रहा था। मैं तेज़ कदमों से घर की तरफ बढ़ा। सिर्फ घर के दरवाज़े पर चिमनी की रोशनी थी। अम्मा दरवाज़े पर ही खड़ी थीं। जो भी था बाई को घर के दरवाज़े तक छोड़कर जाने को था।

बाई ने अँधेरे में ही उसे आशीर्वाद दिया “खुश रह, जीते रह बेटा” और अपनी चप्पलें हाथ में लेकर चिमनी की रोशनी के सहारे भीतर चली गईं। “गोपाल मास्साब को लड़का मिल गओ तो गली में, बोई हाथ पकड़ के घर तक पोंहचा गओ है”। बाई अम्मा को बता रही थीं। मैं लगभग दौड़कर पहुँचा। टॉर्च की रोशनी में मैंने देखा वह अस्फाक था। अस्फाक मुझे देखकर ठहर गया। फिर मेरे पास आया। “बाई को मत बताना यार” कहकर वह अँधेरे में ही अपने टोले की तरफ जाने वाली गली में गुम हो गया।

पतंगे

ज़रूरी एंटीना

पतंगे अपने एंटीनों का इस्तेमाल केवल चीज़ों को सूँघने के लिए ही नहीं करते, बल्कि ये एंटीने उड़ने के दौरान स्टीयरिंग में भी उनकी मदद करते हैं।

ज़्यादातर पतंगों के एंटीने कंघीनुमा और पंखों की तरह होते हैं। कभी-कभी यह पतले भी होते हैं पर तितलियों के एंटीनों की तरह इनके सिरे गोल नहीं होते। तितलियों के एंटीनों के सिरे इयरबड की तरह होते हैं। इन एंटीनों की मदद से पतंगे दूर से ही खाना ढूँढ़ सकते हैं, और दूसरे पतंगों की गन्ध भी ले सकते हैं।

यह एंटीने पतंगों को सन्तुलित उड़ान भरने में भी सहायक होते हैं। इसीलिए जब कभी उनके एंटीने टूट जाते हैं तो वो उड़ते तो हैं, परन्तु उनकी उड़ान डगमगा जाती है। वे दीवारों से टकरा जाते हैं और कभी-कभी तो पीछे की ओर भी उड़ने लग जाते हैं।

विशेषज्ञ से मिलिए...

संजय लेपिडोपेट्रिस्ट हैं, पतंगों के विशेषज्ञ।

पतंगों को ढूँढ़ना इतना मुश्किल क्यों है?

नहीं, ऐसा नहीं है! पतंगों की संख्या तितलियों से दस गुना ज़्यादा है। इसका मतलब यह है कि भारत में हज़ारों-हज़ार पतंगे मौजूद हैं। लेकिन पतंगे रात में सक्रिय होते हैं और ज़्यादातर इन्सान दिन में सक्रिय रहते हैं, इसलिए तुम इन्हें इतनी आसानी से नहीं देख पाते। इन्हें ढूँढ़ने का सबसे सही वक्त रात का है।

हम इन पतंगों को आसानी से कहाँ ढूँढ़ सकते हैं? मुमकिन है कि घर में ही। कुछ पतंगों के इल्लियाँ हमारे कपड़े खाते हैं। हो सकता है कि तुमने इनके वयस्क पतंगे अलमारी से निकलते हुए देखे भी हों। बगीचों और जंगलों में भी तुम बहुत सारे पतंगों को देख सकते हो, खासकर गर्मियों या बारिश के मौसम में। पतंगे बहुत रंग-बिरंगे और अलग-अलग पैटर्न के होते हैं। आकार में ये पेंसिल की नोंक से छोटे और गौरैया से बड़े भी हो सकते हैं।

अनुवाद: मुदित श्रीवास्तव

फील्ड डायरी के लिए

रात में बाहर (घर के बरामदे या बालकनी में) कहीं पर लाइट चालू कर लो और अपनी फील्ड डायरी लेकर इन्तज़ार करो।

रात के समय अपने बगीचे में दो पेड़ों के बीच एक चादर लटकाकर तुम उस पर टॉर्च की रोशनी डाल सकते हो, या फिर स्क्रीन के ऊपर एक सी.एफ.एल बल्ब भी लगा सकते हो। इसकी काफी सम्भावना है कि पतंगे चादर पर या लाइट के पास की किसी दीवार पर आएँ और ठहरें...

- तुम्हें कितने पतंगे दिखाई दिए?
- कितने प्रकार के अलग-अलग पतंगे दिखाई दिए? उनके आकार, रंग और पैटर्न को नोट कर लो।
- उनके एंटीने को ध्यान से देखो और अपनी डायरी में उनका चित्र बनाने की कोशिश करो।

प्रतियोगिता

अपने देखे हुए पतंगों में से सबसे रोचक पतंगे का चित्र हमें भेजो, और यह भी बताओ कि तुम्हें वह रोचक क्यों लगा। अगर तुमने अपने बगीचे या बालकनी में पतंगों को बुलाने के लिए लाइट-ट्रैप लगाया है तो उसकी कुछ तस्वीरें भी chakmak@eklavya.in पर भेजो और एक किताब जीतने का मौका पाओ।

nature conservation foundation
science for conservation

चाबी वाले

निधि और मुनीर   चित्र: शुभम लखेरा

घर में कोई न हो तो ताला होता है, कोई आए तो टँगा हुआ ताला बता देता है – अभी कोई है नहीं। बाद में आना।

मैं कितने सारे घरों के ताले पहचानती हूँ, लेकिन चाबियों को नहीं जानती। कोई न हो तो चाबी शायद जेब में रहती है या फिर किसी गमले या कूड़ेदान के नीचे सोती है। कोई हो तो भी चाबी नहीं टँगी होती। पर ये कहानी मुनीर चाचा की है जिनके दरवाज़े पर ताला नहीं, चाबियाँ टँगी हैं।

“क्या ये चाबियाँ आपकी हैं?”

“ना, चाबियाँ तो तालों की हैं!”

“तो इनके ताले कहाँ हैं?”

“दरवाज़े वालों के पास!”

“तो क्या चाबियाँ दरवाज़ों की नहीं हैं?”

“ना! तालों की हैं! या ताले चाबियों के! उनके इशारों पर खुलते-बन्द होते हैं।”

“फिर आपके पास क्या कर रही हैं?”

“दरवाज़े वालों का इन्तज़ार! वो आएँगे तो ले जाएँगे। चली जाएँगी अपने घर।”

“तो आपके पास क्या बचा रहेगा?”

“दूसरी चाबियाँ!”

"क्या कोई चाबी ऐसी भी हो सकती है जिसका कोई ताला ही न हो? या कोई ताला जिसकी कोई चाबी ही न हो?"

"हर चाबी का कोई न कोई ताला तो होता ही है, और हर ताले को खोलने की चाबी भी। बस कभी-कभी सही चाबी मिलती नहीं। मिल जाए तो लग जाए। कभी ज़िद करती है नहीं लगूँगी तो हम थोड़ा शक्ल-सूरत सँवार देते हैं। फिर लग जाती है।"

"सही चाबी कहाँ जाती है?"

"गुम जाती है!"

"आपके पास इतनी सब चाबियाँ कहाँ से आईं?"

"खोकर आईं। जो खो गईं, वो मुझे मिल गईं। फिर किसी को सही चाबी चाहिए हो तो वो यहाँ आ जाता है। मेरी दुकान सही चाबियों का पता है। तुम्हारी कोई चाबी खो गई है क्या?"

"मेरी अक्ल की चाबी खो गई है! मिलेगी यहाँ?"

"अक्ल पर तो सबकी ताले पड़े हैं! ना बाबा ना! बस यही चाबी मैं कभी बना न पाया। इन्सान की अक्ल की चाबी और मूड की चाबी बनाना तो किसी के हाथ में नहीं है।"

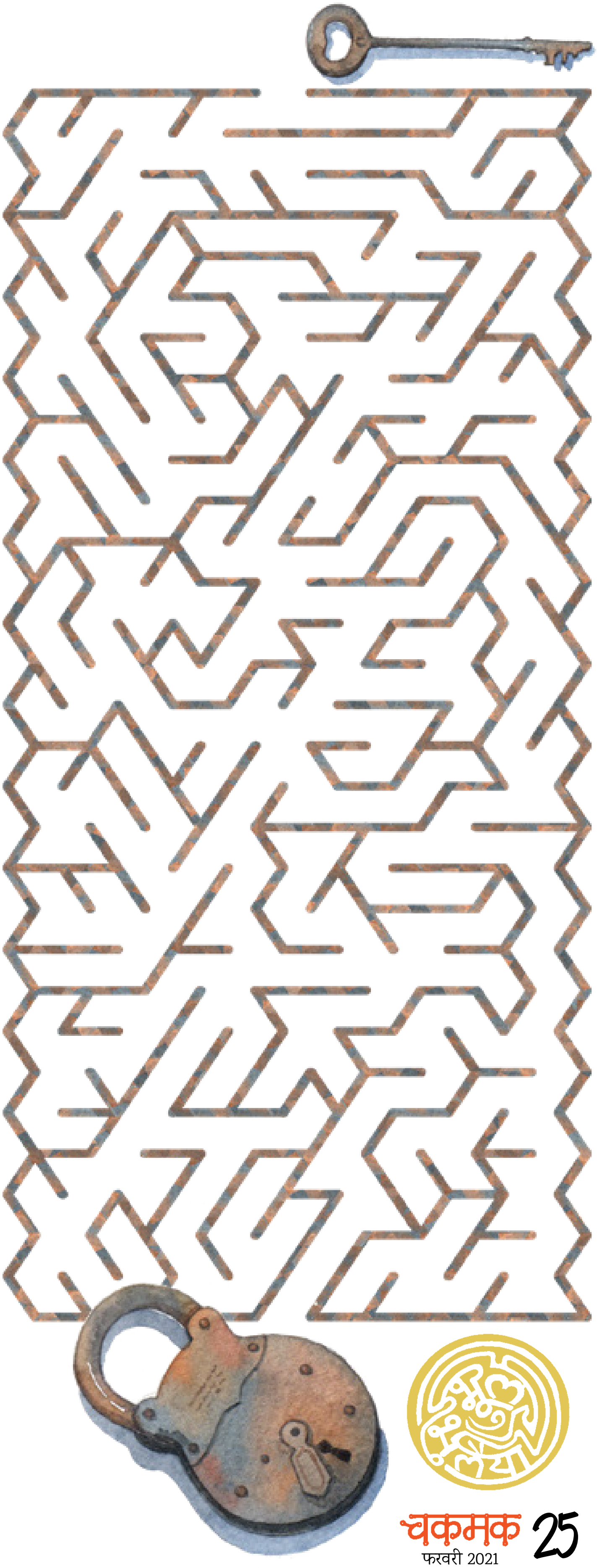

गोल चीज़ें क्यों लुढ़कती हैं

सुशील जोशी

गोल चीज़ के ऊपर और नीचे का सिरा थोड़ा भारी होता है। और अन्दर का खोखला होता है। जब वह ऊपर की ओर से आगे जाती है तो नीचे का भारी सिरा ऊपर आ जाता है। फिर वह आगे जाता है। यह प्रक्रिया जारी रहती है।

शीतल, सातवीं, अज़ीम प्रेमजी स्कूल, मातली, उत्तरकाशी, उत्तराखण्ड

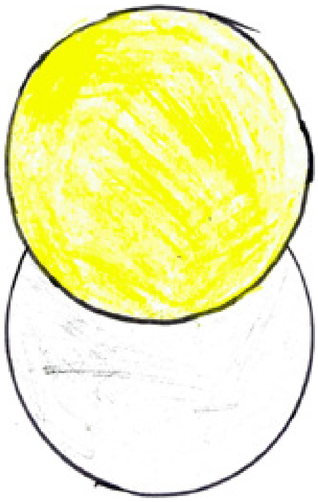

गोल चीज़ों के हाथ-पैर नहीं होते। उनमें बैलेंस नाम की चीज़ नहीं होती और उनके दिमाग भी नहीं होता। इसलिए वह लुढ़क जाती हैं।

हनी बौरासी, ग्यारहवीं, उत्कृष्ट विद्यालय, देवास, मध्य प्रदेश

कुछ समय पहले हमने तुमसे पूछा था कि गोल चीज़ें लुढ़कती क्यों हैं। दिसम्बर अंक में हमने तुम्हारे कुछ जवाब भी छापे थे। सुशील ने तुम सब के जवाब पढ़े। उन्होंने भी अपना जवाब दिया है जिसे तुम यहाँ पढ़ सकते हो...

मज़ेदार सवाल है और उतने ही मज़ेदार तुम्हारे जवाब हैं। मैं भी कुछ और नहीं करूँगा, बस एक मज़ेदार जवाब और जोड़ दूँगा। गेंद के साथ मैं सारी ऐसी चीज़ों को जोड़ लेता हूँ जिनकी सतह गोलाई लिए हुए है – जैसे पहिया, बोतलें, कंचे, सिक्के, चूड़ियाँ वगैरह।

पहले तो कुछ अवलोकन देखते हैं। सिर्फ गेंद ही नहीं लुढ़कती, बहुत-सी और चीज़ें भी लुढ़कती हैं। फिल्मों में कारें लुढ़कती हैं, हीरो-हीरोइन लुढ़कते हैं। देखा जाए तो जब कार पलटती है तो वास्तव में वह लुढ़की ही है – अन्तर सिर्फ इतना है कि वह एक बार लुढ़ककर रुक जाती है। पहाड़ पर से पत्थर भी तो लुढ़कते हैं।

किसी बड़े पत्थर को सरकाना हो तो एक तरफ से डण्डा फँसाकर पलटा देते हैं। तो पत्थर भी लुढ़क जाता है।

यानी पहली बात तो यह है कि कोई भी चीज़ लुढ़क सकती है।

गेंद भी हमेशा नहीं लुढ़कती। यदि हम ज़मीन पर तेल फैला दें तो गेंद या पहिया लुढ़केगा नहीं, फिसलेगा या सरकेगा। ऐसा कई बार बरसात के दिनों में होता है। तुमने लोगों को कहते हुए सुना होगा कि 'गाड़ी स्लिप कर गई'। इसका मतलब है कि उसके पहिए लुढ़कने की बजाय फिसलने लग गए।

मुझे तो लगता है सही तरह से करें तो किसी भी चीज़ को लुढ़का सकते हैं।

तो मैंने यह देखना शुरू किया कि किसी चीज़ को सरकाने और लुढ़काने में अन्तर क्या होता है। जो समझ में आया वह लिख रहा हूँ।

घर्षण के बारे में तो तुम जानते ही होगे। जब दो सतहें एक-दूसरे के सम्पर्क में रहते हुए अलग-अलग चलने की कोशिश करती हैं तो उनकी सम्पर्क वाली सतहों के बीच में एक बल लगता है जो उनकी चाल को रोकता है। जैसे यदि कोई

किताब मेज़ पर रखी है और हम किताब को सरकाना चाहें तो मेज़ और किताब के बीच लगने वाला घर्षण का बल हमारी कोशिश को नाकाम करने में जुट जाता है। जब हम घर्षण बल से ज़्यादा ताकत लगा देते हैं तो किताब सरकने लगती है।

अब ज़रा गेंद को देखो। उसका बहुत थोड़ा-सा हिस्सा ही मेज़ के सम्पर्क में होगा। तो घर्षण भी उतने ही हिस्से पर काम करेगा। अब तुमने गेंद को धक्का दिया। तो जिस हिस्से पर घर्षण बल काम कर रहा है, वह तो रुका रहेगा, लेकिन बाकी गेंद चल पड़ेगी। तो क्या होगा? होगा यही कि वह लुढ़क जाएगी।

यदि घर्षण की बात सही है तो सतह जितनी चिकनी होगी, गेंद को लुढ़कने में उतनी मुश्किल होनी चाहिए। इसकी जाँच के लिए कुछ प्रयोग करके देखना पड़ेगा। इसके लिए गेंद को हम एक ऐसे पटिए पर लुढ़काएँगे जो थोड़ा झुकाकर रखा गया है। झुका हुआ पटिया इसलिए कि यदि हम हाथ से धक्का देकर गेंद को लुढ़काने की कोशिश करेंगे तो हर बार बराबर ताकत लगाई, यह कैसे पता चलेगा।

अब करना सिर्फ इतना है कि गेंद को पटिए के ऊपरी किनारे पर रखकर छोड़ दो और देखो कि वह लुढ़ककर नीचे जाती है या फिसलकर। एक तो यह करके देख सकते हो कि पटिए का झुकाव थोड़ा-थोड़ा बढ़ाते जाओ और देखो कि कितना झुकाने के बाद गेंद लुढ़कने के साथ-साथ फिसलने भी लगती है।

फिर यह कर सकते हो कि पटिए पर थोड़ा पानी डालकर गीला कर दो या तेल पोत दो। अब देखो कि गेंद लुढ़कती है या फिसलती है।

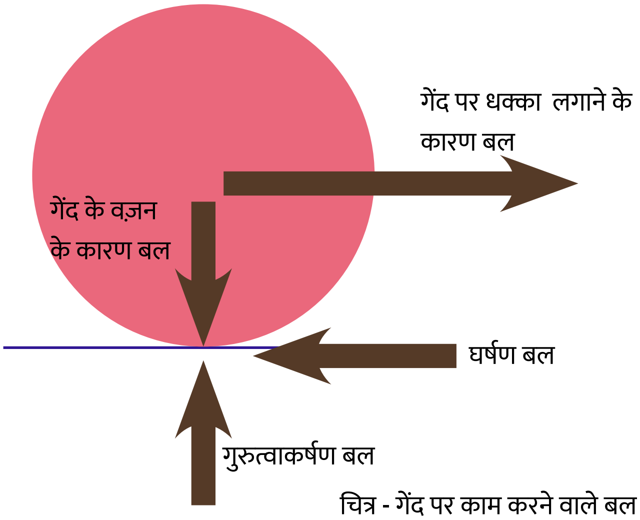

चित्र - गेंद पर काम करने वाले बल

गेंद के लुढ़कने का मुख्य कारण यही है कि उसका बहुत कम हिस्सा (लगभग एक बिन्दु) ज़मीन के सम्पर्क में रहता है और घर्षण के कारण आगे नहीं बढ़ पाता जबकि बाकी गेंद आगे बढ़ जाती है। बाद में वह हिस्सा भी आगे बढ़ता है लेकिन तब तक अगला हिस्सा ज़मीन को छूने लगता है और गेंद लुढ़कती जाती है।

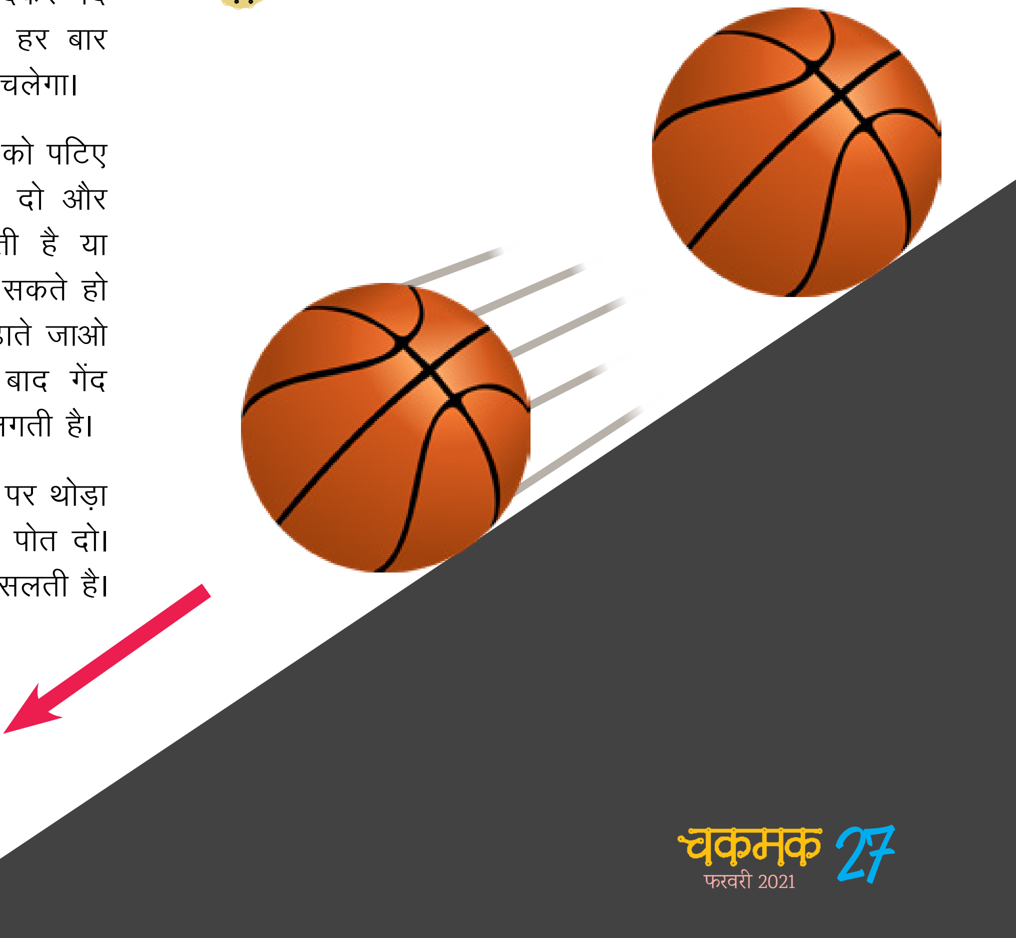

तालाबन्दी में बचपन

थकान ऑन लाइन

प्रार्थना

चित्र: अंकिता ठाकुर

पहले महीने ऑनलाइन क्लासेस शुरू होते ही हम भाई-बहनों की खुशी दुगुनी हो गई। अब मोबाइल पर खेल के साथ थोड़ी-सी पढ़ाई भी हो जाएगी। जब हम सभी मोबाइल पर आए हुए काम कर रहे होते या लिखने में ज़रा-सा ध्यान लगा ही होता तभी फोन बन्द हो रहता। समस्या यह थी कि जब तक क्लास खतम नहीं होती तब तक फोन के सामने ही रहना पड़ता था। कुछ देर बाद हाथ भी दुखने लगता। अगर ज़्यादा काम होता तो थक भी जाते। ऑनलाइन क्लासेज़ शुरू होते ही कभी भाई शोर मचाने लगता, तो कभी टी. वी. चलने लग जाता। मम्मी टी. वी. बन्द करवा देतीं तो वह शोर मचाने लगता। उन्हें वह डाँटतीं और कभी-कभार पीट भी देतीं। मेरा सारा ध्यान वहीं चला जाता। मैम कहतीं कि इस शोर को कम करवाओ और तुम उधर देखो मत। मैं जो पढ़ा रही हूँ उस पर ध्यान लगाओ।

पापा बाहर से आते लेकिन उन्हें ध्यान नहीं रहता कि मैं क्लास

कर रही हूँ। वे कहते, “प्रार्थना चाय बना दे।” तब मम्मी, पापा से कहतीं कि मैं बना देती हूँ चाय, उसकी क्लासेज़ चल रही हैं। ध्यान रखा करो! हम सभी एक ही रूम में रहते हैं। भाइयों को तो मैं कहीं भेज नहीं सकती, न मैं ही कहीं शान्ति वाली जगह पर जा सकती हूँ क्योंकि हमारे पास बस यही एक कमरा है। मेरी क्लास चल रही होती और भाई मम्मी से ज़िद कर रहा होता कि टी. वी. शुरू कर दो, मेरा प्रोग्राम आने वाला है, मुझे टी. वी. देखने दो। कम आवाज़ में चलाऊँगा। मम्मी भाई से कहतीं, “नहीं! तेरी बहन डिस्टर्ब होगी।”

पहला महीना जैसे-तैसे पूरा हुआ। दूसरे महीने से क्लासेज़ स्कूल टाइम पर ही होतीं। सारी क्लासेज़ नहीं भी होतीं, लेकिन तीन-चार क्लासेज़ की वर्कशीट तो आती ही। वर्कशीट के साथ अब टैस्ट पेपर भी आने लगे थे। सुबह क्लास पूरी नहीं हो पाती तो मैम शाम को भी क्लासेज़ रख देतीं। जिस समय क्लास होने वाली होती, उससे आधे घण्टे या पन्द्रह मिनट पहले स्कूल वाले बताते। अजीब चक्कर है किसी भी समय क्लास ले लेती हैं मैम! बार-बार फोन चैक करते रहना पड़ता है, कहीं मैसेज़ तो नहीं आया क्लास करने को। कभी-कभी तो कोई क्लास छूट भी जाती क्योंकि कोई फिक्स टाइम तो नहीं होता कि गणित की क्लास 8 बजे ही मैम लेंगी या इंग्लिश की क्लास 6 बजे। सुबह के टाइम पर ऐसा बिलकुल नहीं होता। पापा आठ बजे ही काम पर चले जाते हैं फिर वे शाम को ही लौटते। उनके लौटने पर ही वर्कशीट भेजना सम्भव होता। क्योंकि पापा काम पर फोन लेकर जाते हैं। मैं पापा से कहती भी कि पापा आज फोन घर पर ही छोड़ दो तो पापा कहते, “नहीं! मेरे अर्जेंट फोन आते रहते हैं।”

जब मैं क्लास करती हूँ तो उस समय मोबाइल को पकड़े-पकड़े हाथ दुख जाता है। कभी-कभार ऐसा भी होता है कि सात बजे एक मैम ने क्लास लेने को कहा तो दूसरी मैम का भी मैसेज आ जाता कि तुम्हारी क्लास सात बजे से ही है, और क्लासेज़ सब की करनी होती हैं। रेशमा मैम को बच्चे बताते कि नेहा मैम ने सात बजे क्लास लेने को कहा है और आप भी सात बजे कह रही हैं। हम लोग दो-दो क्लास एक साथ नहीं ले पाएँगे। मैम ने कहा कि मुझे नहीं पता था कि नेहा मैडम ने भी सात बजे क्लास को कहा है, कोई बात नहीं मैम की क्लास चालीस मिनट की ही तो होती है।

चालीस मिनट तक लगातार फोन पकड़े-पकड़े हाथ दुख जाता है फिर तुरन्त अगली क्लास भी चालीस मिनट की ही होती। उस समय ध्यान मैम की पढ़ाई पर कम होता और हाथ के दर्द पर ज़्यादा। जब वर्कशीट करनी होती हैं तो दो-दो वर्कशीट एक साथ ही करनी होती हैं। एक विज्ञान की तो दूसरी गणित की। अलग-अलग विषय की दो वर्कशीट आतीं। वैसे तो वर्कशीट करते समय उतनी परेशानी नहीं होती क्योंकि एक नज़र फोन की तरफ होती है दूसरी कॉपी की तरफ। लेकिन क्लास लेते समय फोन पर ही नज़रें टिकाए रखनी होती हैं। जिस कारण आँखें दुखने लग जाती हैं।

कभी-कभी फोन देखते-देखते सिर में दर्द बहुत होने लगता और आँखें नींद से भर जातीं। आँखें भारी-भारी हो रहतीं। उस समय मन करता कि अब काम-वाम सब छोड़कर सो जाऊँ। लेकिन, मुझे पापा के फोन माँगने से पहले अपना काम खतम करना होता है।

बहुत देर एक जगह बैठे-बैठे हाथ-पैर सुन्न पड़ जाते हैं। वैसे तो मुझे पैर मोड़कर बैठने की आदत नहीं है। लेकिन, क्लास के समय मुझे पैर मोड़कर बैठना पड़ता है, जिसकी वजह से मेरी टाँगें रात को सोते समय दुखती रहती हैं। कभी-कभी तो दर्द के मारे मैं रात भर सो भी नहीं पाती। अब तो मेरा टी. वी. देखना एकदम ही बन्द हो गया है। अगर स्कूल का काम ज़्यादा होता है तो मम्मी को कई बार खाना खाने के लिए बुलाना पड़ जाता।

कभी-कभार गर्दन में अचानक से चटके आने लग जाते। लिखते-लिखते हाथ तो दुखता ही, साथ ही मेरा कन्धा भी दुखने लग जाता। क्लास लेते समय मेरे कमर में भी दर्द रहता है। पैर में झनझनाहट हो रहती। जब से ठण्ड आई है तब से सुबह में ठण्डे पानी से हाथ धोते ही बहुत देर तक वह सुन्न पड़ जाता है। जिस हाथ से फोन को पकड़ रखा होता है, वह हाथ कँपकँपाता रहता है। फोन को देखते-देखते आँखों से साफ देखना भी मुश्किल लगता। कुछ तो पैन को पकड़े-पकड़े और कुछ ज़्यादा लिखने से उँगलियाँ भी दुखने लग जातीं। कभी बैठे-बैठे कमर अकड़ जाती है। घर के और लोग परेशान ना हो इसलिए कान में लीड लगा लेती हूँ। सारे बच्चे एक साथ बोलने लगते हैं तो झन-झन की आवाज़ आने लग जाती है।

ऑनलाइन क्लासेज़ करने की वजह से कन्धा तो दुखता ही है, नहीं तो सारे बच्चे एक साथ नहीं बोलते कि मैम, मेरा सर दुखने लगा है। मम्मी को बताती हूँ तो मम्मी मेरी परेशानी समझ जाती है और मुझसे कहतीं कि कुछ देर आराम कर ले, घर का सारा काम मैं कर लूँगी। लेकिन मुझे अच्छा नहीं लगता कि मम्मी काम करें और मैं आराम! ऑनलाइन क्लासेज़ की वजह से मैं मम्मी का हाथ भी बँटा नहीं पाती। और कुछ दिनों से मैंने न टी. वी. देखा है, और न बाहर खेलने ही गई हूँ।

प्रार्थना, सर्वोदय कन्या विद्यालय, दिल्ली में आठवीं कक्षा की छात्रा हैं। वह पिछले तीन सालों से अंकुर से जुड़ी हुई हैं। प्रार्थना को लिखना अच्छा लगता है।

माथापच्ची

इन टुकड़ों को जोड़कर क्या तुम ऊँट की पूरी तस्वीर बना सकते हो?

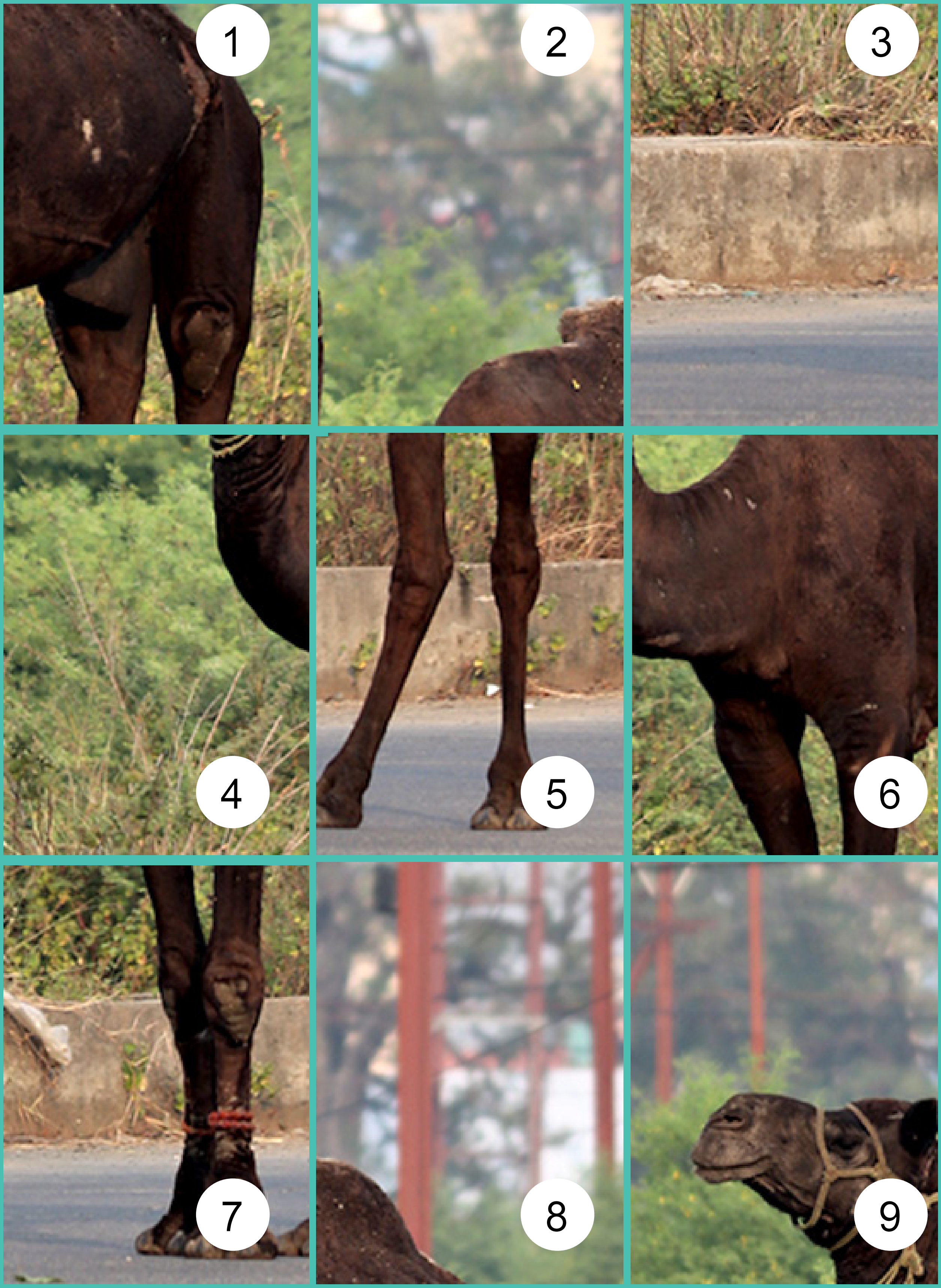

फोटो: दीपाली शुक्ला

मेरा पन्ना

मेरा दोस्त - टॉमी

अथर्व खाडे, पाँचवीं, प्रगत शिक्षण संस्थान,
फलटण, सतारा, महाराष्ट्र

हमारे घर में एक कुत्ता है। उसका नाम टॉमी है। वह और मैं बहुत अच्छे दोस्त हैं। जब हम आइसक्रीम खाते हैं तो वह ज़रूर माँगता है। उसका रंग बिलकुल काला है। और खाते समय वह बिल्ली जैसा दिखता है। एक बार जब साँप घर में आया तो उसने साँप को रात भर रोककर रखा। हमने सुबह उठकर देखा तो उसने साँप को मार दिया था। हम दोनों बहुत मस्ती करते हैं। टॉमी हमारे घर में किसी को आने नहीं देता। जब कोई आता है तो वह ज़ोर-ज़ोर से भौंकने लगता है। ऐसा है मेरा टॉमी।

दीदी और मैं

चित्र: कनिष्क घोरपडे, नौवीं, कमला निम्बकर बालभवन, फलटण, सतारा, महाराष्ट्र

सुहानी, चौथी, एसडीएमसी स्कूल, हौज़ खास, दिल्ली

आज मैं और दीदी घर पर अकेले थे। क्योंकि मम्मी-पापा बाहर सब्ज़ी लेने गए थे। ऐसे तो मैं और दीदी लड़ते नहीं हैं। पर आज दीदी ने मुझे नाखून मार दिया। फिर मुझे भी आया गुस्सा और मैंने भी दीदी को मार दिया। अब मुझे और दीदी को गुस्सा आया और हम दूर-दूर बैठ गए। पर मेरा मन दीदी से बात करने का किया। तो मैंने सोचा कि मुझे दीदी को मनाना चाहिए। तो मैं फटाफट दुकान पर गई और उनकी फेवरेट चीज़ लेकर आई। दीदी ने वो खाई और झट-से गले लग गई।

भण्डारा

लेख व चित्र: गौरी मिश्रा, चौथी,
प्राथमिक विद्यालय धुसाह - प्रथम, बलरामपुर, उत्तर प्रदेश

एक बार हमारे घर पर भण्डारा हुआ। हम लोग सुबह पाँच बजे उठे। और बहुत सारा काम किया, जैसे रंगोली बनाना, थाली सजाना, हनुमान जी का फोटो लगाना, गुब्बारे सजाना आदि। पापा ने हलवाई और टेंट वाले को बुलवाया। सांसद जी भी आने वाले थे पर किसी कारण वो आ नहीं पाए। ग्यारह बजे भण्डारा शुरू हुआ। साउंड पर भजन बज रहे थे। भण्डारे में पूड़ी-सब्ज़ी और नुक्ती बनी थी। हम लोग पत्तल में सब रखकर खा रहे थे। गाँव के कुछ बच्चे पापा को परेशान कर रहे थे। वो पूड़ी अपनी थाली में रख लेते या गिरा देते। मुझे बहुत गुस्सा आ रहा था। मैंने उनसे कहा, “जितनी पूड़ी खानी हो, उतनी खा लो। पर परेशान मत करो।”

मेरा पन्ना

एक सौम्य, जंगली जीव से पहली मुलाकात

चित्र व लेख: आरिन दांग, नौ साल, साउदर्न क्रॉस ग्रामर मेलबर्न, ऑस्ट्रेलिया
अनुवाद: कविता तिवारी

हर साल मैं अपने नाना-नानी से मिलने भारत आता हूँ। हरिद्वार में मेरे नाना का फार्म हाउस है। शहर के शोर-शराबे से दूर फॉर्म हाउस के शान्त माहौल में वक्त बिताना मुझे बहुत अच्छा लगता है। वहाँ मैंने कई जंगली जीवों को देखा है। अक्सर ये जीव खेतों पर हमला करने चले आते हैं क्योंकि खेत जंगल से सटे हुए हैं। एक बार मैंने गन्ने की फसल में एक तेन्दुए को देखा था। मुझे तो यकीन ही नहीं हो रहा था कि मैंने एक जंगली बिल्ली को इतने करीब से देखा है।

मेरे नाना हाथियों के बड़े प्रशंसक हैं। एक बार उन्होंने हमें राजाजी नेशनल पार्क घुमाने की योजना बनाई। मैंने कभी जंगली हाथी नहीं देखे थे। इसलिए जंगल जाने से एक दिन पहले नाना ने मुझे जंगल में 'क्या करना है' और 'क्या नहीं करना है' यह बताया। जैसे, उन्होंने मुझे बहुत चटक रंग पहनने से मना किया, खाकी रंग के कपड़े पहनने को कहा। उन्होंने मुझे इत्र या किसी भी तरह की सुगन्धित चीज़ लगाने से भी मना किया। क्योंकि हाथियों की सूँघने की क्षमता काफी अच्छी होती है। और उन्होंने मुझे अपना मुँह किसी कपड़े से ढँकने के लिए कहा क्योंकि जंगल के रास्ते में काफी धूल हो सकती है। उन्होंने यह भी बताया कि हमें शान्ति बनाए रखना चाहिए और जंगल की 'अलार्म कॉल' सुनने के लिए चौकन्ना रहना चाहिए। अलार्म कॉल सम्भावित शिकार द्वारा अपने साथी जानवरों को शिकारी (परभक्षी) के स्थान के बारे में सचेत करने के लिए होती है।

अगली सुबह मैं जल्दी उठकर तैयार हो गया। तीस मिनट की सफारी के दौरान मैंने चीतल का झुण्ड देखा। फिर हम थोड़ी देर के लिए रुके और अलार्म कॉल का इन्तज़ार करने लगे। कुछ ही देर बाद हमारी जीप के ड्राइवर ने एक ओर इशारा किया। मुझे यकीन ही नहीं हुआ कि झाड़ियों के बीच से एक हाथी आ रहा था। वह शान्त लग रहा था लेकिन ऐसा मालूम होता था जैसे वो हमारी ही तरफ आ रहा हो।

मैं काफी घबरा गया था, और मेरे पापा भी। उन्होंने मेरे हाथ भींचे। वो जैसे सुन्न हो गए थे। उधर मेरी मम्मी और नाना लैंस के पीछे से हाथी को निहारने से अपने आप को रोक नहीं पा रहे थे।

वे उस सौम्य विशालकाय जीव को विस्मित होकर देख रहे थे। उस पल मुझे एहसास हुआ कि मेरे नाना को फोटोग्राफी में कितनी दिलचस्पी है। वे किसी चट्टान की तरह जीप में खड़े थे और निडर होकर उसका सामना कर रहे थे। उनकी उँगलियाँ जैसे स्थिर हो गई थीं ताकि वे एक स्पष्ट तस्वीर ले सकें। हम शान्त और स्थिर होकर कुछ मिनटों तक हाथी को देखते रहे।

यही वह पल था जब मुझे एहसास हुआ कि यह कितना शानदार जानवर है। मैं समझ पाया कि कौन-सी बात इस जीव को इतना अद्भुत और आकर्षक बनाती है। मैं वहाँ ज़्यादा से ज़्यादा देर रुककर हाथी को देखना चाहता था। मैंने सोचा नहीं था कि मैं कभी किसी वन्यजीव के साथ ऐसा जुड़ाव महसूस करूँगा।

मेरा पन्ना

साँप

पवन गुर्जर, दस साल, ग्रामीण शिक्षा केन्द्र, सवाई माधोपुर, राजस्थान

एक बार एक गाँव था। उस गाँव में बहुत सारे साँप भी थे। वे साँप बच्चों को खेलते समय डस लेते थे जिससे बहुत से बच्चों की मौत भी हो गई थी। उसी गाँव में एक पेड़ पर एक तोता रहता था। उसने भी कई बार उन साँपों को देखा और इन साँपों से बच्चों को बचाने का उपाय सोचने लगा।

उसे याद आया कि साँप मोर से डरते हैं। मोर साँप को अपनी चोंच से मार देते हैं, उन्हें खा भी जाते हैं। तोता जंगल में गया और वहाँ जाकर उसने एक मोर को सारी समस्या के बारे में बताया। मोर उनकी मदद करने के लिए तैयार हो गया। मोर अपने दो-तीन साथियों को लेकर उस तोते के साथ-साथ गाँव में आ गया।

तोते ने गाँव में आकर गाँव वालों को बताया कि ये मोर हमारी मदद करेंगे। और हमें साँपों से छुटकारा मिल सकेगा। वे मोर गाँव में जगह-जगह रहने लगे। साँप के दिखते ही वे उस पर टूट पड़ते और उसे मार भगाते। इस तरह धीरे-धीरे उस गाँव की साँपों की समस्या समाप्त हो गई। गाँव वाले तोता और मोर से बहुत खुश हुए। उन्होंने तोते और मोरों को अपने गाँव में ही रख लिया तथा उनके लिए दाना-पानी, चुग्गा आदि डालने लगे।

चित्र: हिकमतुल्ला, किलकारी बाल भवन, पटना, बिहार

चित्र: चंचला, सोलह वर्ष, मंज़िल संस्था, दिल्ली

माथापच्ची

1. 7, 2, 3 और 5 का इस्तेमाल करके 36 कैसे ला सकते हैं?

2. चित्र में लाल रंग के कितने त्रिभुज हैं?

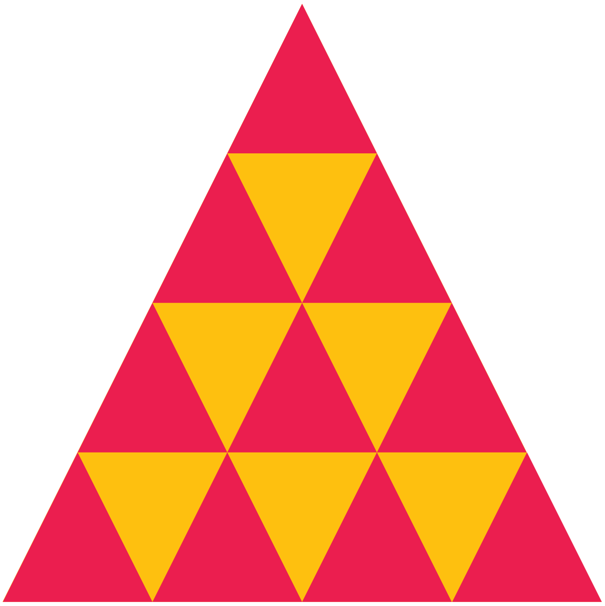

3. तीन बक्सों में कुछ गेंदें रखी हैं। एक में नीले रंग की, दूसरे में लाल रंग की और तीसरे में नीली व लाल रंग की। सभी बक्सों पर चिप्पी लगी है लेकिन सभी चिप्पियाँ गलत लग गई हैं। तुम किसी भी एक बक्से में से केवल एक गेंद निकालकर देख सकते हो। बस उसी के आधार पर तुम्हें चिप्पियों को ठीक करना है। तुम कौन-से बक्से को खोलोगे?

4. चार गेंदें अलग-अलग ऊँचाई से ज़मीन पर गिराई जाती हैं। कौन-सी गेंद ज़मीन से टकराने के बाद सबसे ज़्यादा उछलेगी, और कौन-सी सबसे कम?

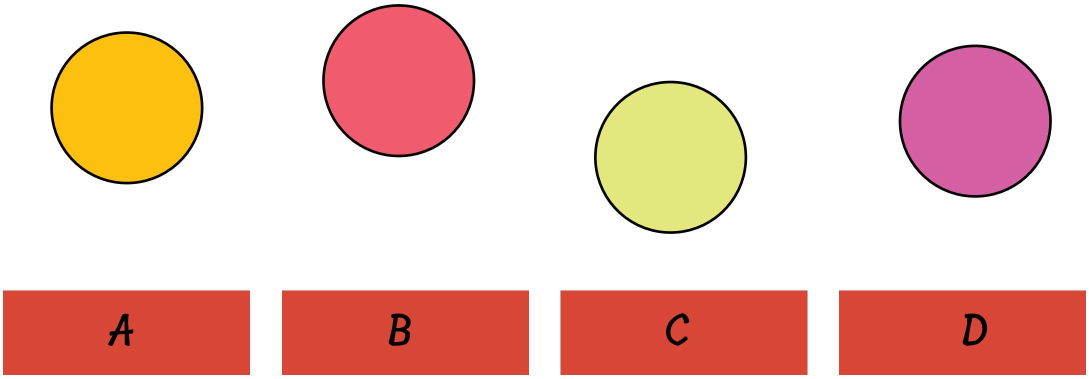

5. सोमवार का दिन था। दो चोर बैंक लूटकर कार में बैठे। पुलिस ने चोरों का पीछा किया। पीछा करने पर पता चला कि चोरों की कार की पीछे की नम्बर प्लेट की हैडलाइट खराब थी। और पुलिस की जीप की हैडलाइट भी खराब थी। फिर भी पुलिस ने उन चोरों को कैसे पकड़ लिया?

6. मसाले की एक दुकान के मालिक ने 7 नम्बर के जूते पहन रखे हैं। और उसकी खुद की लम्बाई भी 5 फुट 7 इंच ही है। जबकि उसके पास तराजू 7 साल पुराना वाला है, तो वह तराजू में क्या तौलेगा?

7. यदि रात के 12 बजे बारिश हो रही हो तो क्या 72 घण्टे बाद धूप निकल सकती है?

8. नीचे दिए चौकोर को 5 हिस्सों में इस तरह बाँटना है कि उसके 4 भाग बराबर हों। और ऐसा तुम्हें पैन या पेंसिल को उठाए बिना करना है।

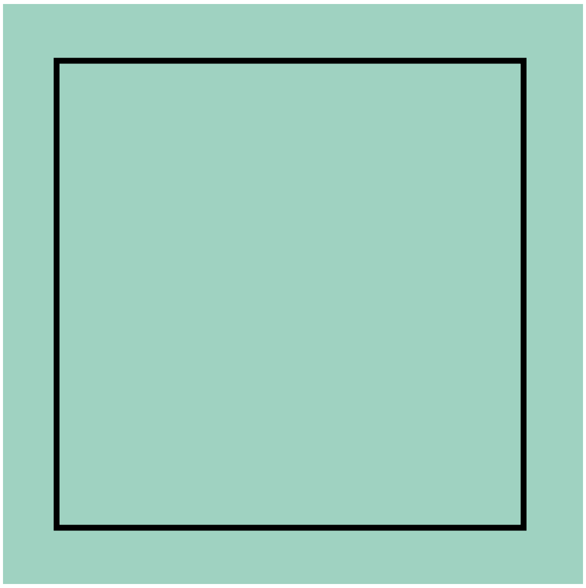

9. शनिवार की एक दोपहर एक आदमी की लाश घर में मिली। पुलिस ने वारदात के समय घर में मौजूद सभी लोगों से पूछताछ की।

पत्नी: मैं नहा रही थी।

बेटा: मैं किताब पढ़ रहा था।

रसोइया: मैं नाश्ता बना रहा था।

नौकर: मैं कपड़े तह लगा रहा था।

माली: मैं पौधों की गुड़ाई कर रहा था।

यह सुनने के बाद पुलिस को कातिल को पहचानने में ज़रा भी समय नहीं लगा। तुमने भी कातिल को पहचान लिया क्या?

10. केवल 2 लाइनों को इधर-उधर करके इस संख्या को 25 में बदलना है। कैसे करोगे?

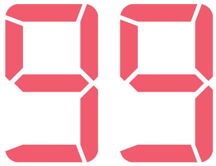

फटाफट बताओ

बिन पानी के घर बनाए
सबके घर में वो मिल जाए

(मकड़ी)

आग लगे तो पानी बहे, पानी गिर जम जाए
दूजों को दे रोशनी, अपना बदन गलाए

(मोमबत्ती)

क्या है जो ऊपर-नीचे आती-जाती है,
फिर भी एक ही जगह रहती है?

(सीढ़ी)

सीधा होकर खाने के काम आऊँ
उलटा होकर नाच दिखाऊँ

(चना)

बिन पंखों के उड़ूँ,
बिन आँखों के रोऊँ

(बादल)

सीधी होकर बेल कहाए,
उलटी होकर ताल सुनाए

(लता)

हाथ आए तो सौ-सौ काटे,
जब थके तो पत्थर चाटे

([illegible])

पूँछ कटे तो सीता, सिर कटे तो मित्र
मध्य कटे तो खोपड़ी, पहेली बड़ी विचित्र!

([illegible])

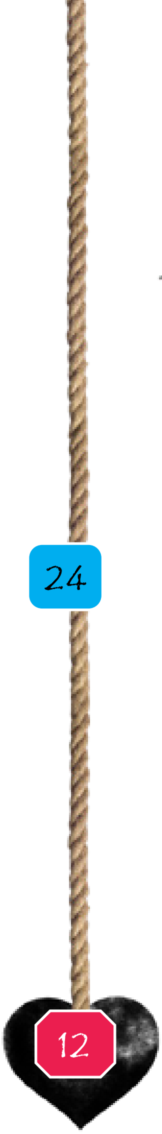

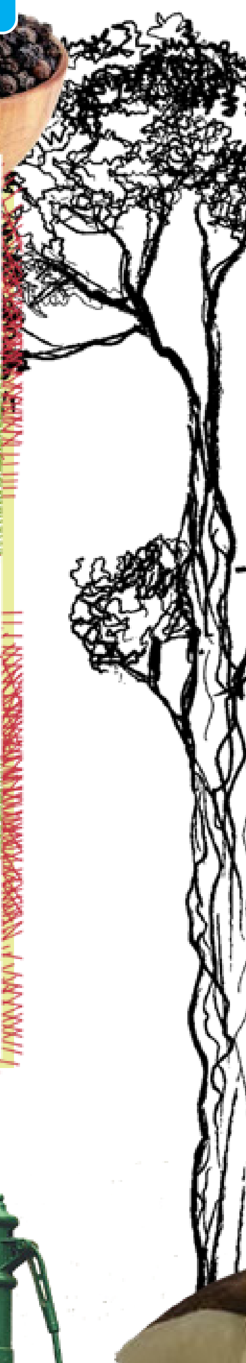

	1			2	3			4
5			6				7	
			8					
9		10			11	12		
				13				14
	15		16				17	
					18			
19			20	21			22	23
	24					25		

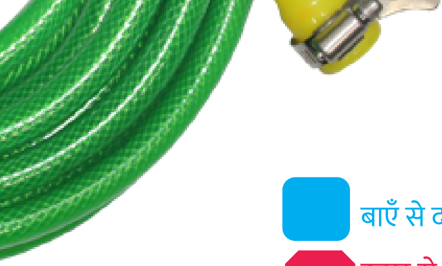

बाएँ से दाएँ

ऊपर से नीचे

चित्र पहेली

सुडोकू-39

5	1	8		7		9		4
	2	6				5	8	7
							2	
2	5		4	6		8		9
		1	3		5	6		2
	9	7			2			
8	6			1	9		4	
	3					7		
	7		5			2	6	

दिए हुए बॉक्स में 1 से 9 तक के अंक भरने हैं। आसान लग रहा है न? पर ये अंक ऐसे ही नहीं भरने हैं। अंक भरते समय तुम्हें यह ध्यान रखना है कि 1 से 9 तक के अंक एक ही पंक्ति और स्तम्भ में दोहराए न जाएँ। साथ ही साथ, गुलाबी लाइन से बने बॉक्स में तुमको नौ डब्बे दिख रहे होंगे। ध्यान रहे कि हर गुलाबी बॉक्स में भी 1 से 9 तक के अंक दुबारा न आएँ। कठिन भी नहीं है, करके तो देखो। जवाब तुमको अगले अंक में मिल जाएगा।

माथापच्ची जवाब

1. (7x5)+3-2 = 36।

2.

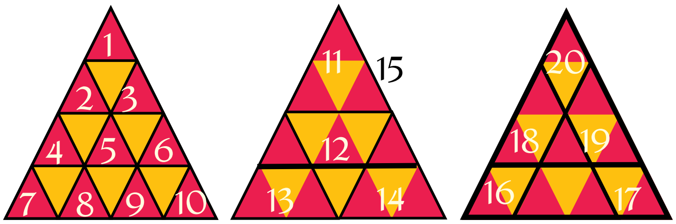

3. उस बक्से को खोलो जिसमें लाल और नीले कंचे की चिप्पी लगी है। चूँकि सभी चिप्पियाँ गलत लगी हैं, इसलिए उसमें या तो लाल कंचे होंगे या नीले। अब अगर उसमें नीला कंचा निकला तो जिस बक्से में नीले कंचे की चिप्पी लगी है उसमें ज़रूर लाल कंचे होंगे, वरना चिप्पी सही हो जाएगी। और इसलिए जिसमें लाल कंचों की चिप्पी लगी है उसमें लाल व नीले दोनों कंचे होंगे।

4. B वाली गेंद सबसे ज़्यादा और C वाली सबसे कम उछलेगी।

5. क्योंकि सोमवार का दिन था, रात नहीं।

6. मसाले की दुकान वाला है तो मसाला ही तौलेगा ना।

7. नहीं, क्योंकि रात के 12 बजे हैं तो 72 घण्टे बाद भी रात के 12 ही बज रहे होंगे। इसलिए धूप निकलने की कोई सम्भावना नहीं है।

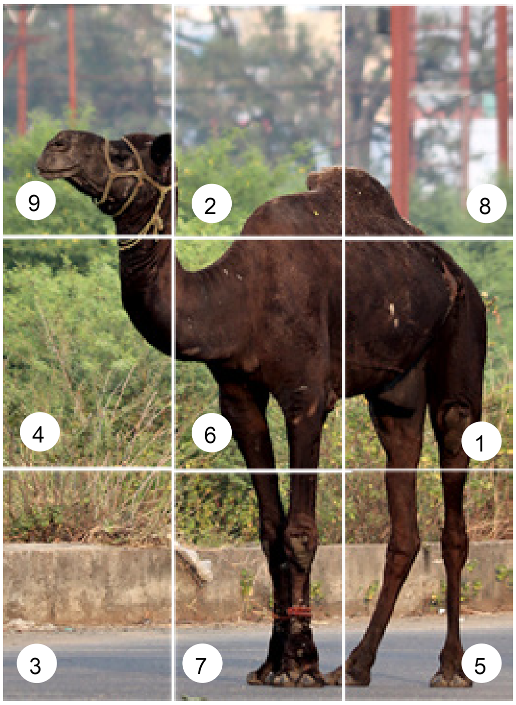

8.

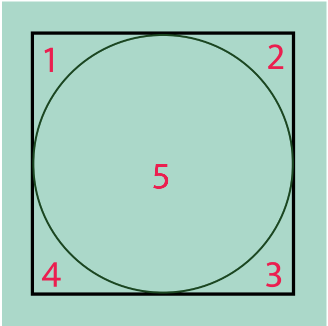

9. रसोइए ने कहा कि वह नाश्ता बना रहा था। वारदात तो दोपहर के समय हुई थी तो वो नाश्ता कैसे बना रहा था। इससे पुलिस को पता चल गया कि वो झूठ बोल रहा है।

10. 5×5

जनवरी की चित्रपहेली का जवाब

1 क	2 ब	ड्डी		3 कु	र्सी		4 प		5 झा
	ण्ड			र्ता			6 ह	थौ	ड़ी
7 खे	ल	कू	8 द		9 प	ण्डा	ल		
मा			र्जे		ट		10 वा	ह	11 न
	12 मै	दा	न		13 क	मा	न		गा
14 चू	ना			15 ची	नी			16 ब	ड़ा
हा			17 जू	ता		18 त	न्दू	र	
	19 अ	खा	ड़ा		20 ती	र		21 छा	पा
22 च	ना			23 गें		क			
	24 र	स्सी	कू	द		25 श	त	रं	ज

सुडोकू-38 का जवाब

6	7	9	3	5	2	1	8	4
1	8	2	9	4	6	7	3	5
4	3	5	7	8	1	6	9	2
9	2	8	6	1	3	5	4	7
7	5	4	2	9	8	3	6	1
3	1	6	4	7	5	8	2	9
8	6	7	5	2	4	9	1	3
2	9	3	1	6	7	4	5	8
5	4	1	8	3	9	2	7	6

बन्दरों को खाना देकर लोग सोचते हैं कि

वे भगवान का आदर कर रहे हैं।

अपनी दयालुता के बदले उन्हें पापों से मुक्ति मिल जाएगी।

वन्यजीव का संरक्षण करने में मदद कर रहे हैं।

लेकिन बन्दरों को खाना देकर असल में वे

उनकी इकोलोजी को खराब कर रहे हैं। और पत्ते खाने व बीज फैलाने वाले जीव को जंक फूड का आदी बना रहे हैं।

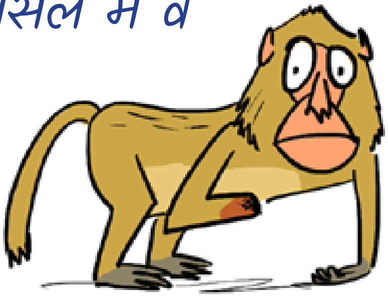

उन्हें सड़क हादसों का शिकार बना रहे हैं।

यह साबित हो चुका है कि इस तरह से अधिक खाना देने से बन्दरों में तनाव बढ़ता है

रोहन चक्रवर्ती

RNI क्र. 50309/85 डाक पंजीयन क्र. म. प्र./भोपाल/261/2021-23

मछली जल की रानी है...

मछली

रिनचिन

मछली जल की रानी है
जीवन उसका पानी है
बाहर निकालो मर जाएगी
तेल में डालो तल जाएगी
मुँह में डालो गल जाएगी

चित्र: राशि और अदिति, मुस्कान संस्था, भोपाल, मध्य प्रदेश

पुरानी कहानी

सुशील शुक्ल

मछली जल की रानी है
पर यह बात पुरानी है

चित्र: रेणुका, स्वाति, आलिया और मुस्कान,
मुस्कान संस्था, भोपाल, मध्य प्रदेश

प्रकाशक एवं मुद्रक राजेश खिंदरी द्वारा स्वामी रैक्स डी रोज़ारियो के लिए एकलव्य फाउंडेशन, जाटखेड़ी, फॉर्च्यून कस्तूरी के पास, भोपाल, मध्य प्रदेश से प्रकाशित एवं आर के सिक्युप्रिन्ट प्रा लि प्लॉट नम्बर 15-बी, गोविन्दपुरा इण्डस्ट्रियल एरिया, गोविन्दपुरा, भोपाल - 462021 (फोन: 0755 - 2687589) से मुद्रित।
सम्पादक: विनता विश्वनाथन